P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

परिवर्तन एवं विकास का मिथक : कल्याणकारी योजनाओं और पंचायतीराज के बावजूद (बाजपुर विकासखण्ड की बुक्सा जनजातीय महिलाओं के सन्दर्भ में)

हेम चन्द्र
शोध छात्र,
समाजशास्त्र विभाग,
सोबन सिंह जीना परिसर,
अल्मोड़ा,
कु0वि0वि0,
नैनीताल

रेनू प्रकाश
असिस्टेंट प्रोफेसर,
समाजशास्त्र विभाग,
सोबन सिंह जीना परिसर,
अल्मोड़ा,
कु0वि0वि0,
नैनीताल

सारांश

आजादी के बाद भारत में नये संविधान द्वारा महिलाओं को समानता, स्वतन्त्रता और न्याय के अधिकार प्रदान किए गए जिसके कारण महिलाओं की संसाधनों और सेवाओं तक पहुँच को बढ़ावा व सरकार द्वारा महिलाओं के कल्याण के लिए विभिन्न योजनाएं बनाई गई लेकिन बुक्सा जनजाति की महिलाएं अशिक्षा के कारण अपने अधिकारों व सरकार की कल्याणकारी योजनाओं का लाभ नहीं प्राप्त कर सकी। यद्यपि आज बुक्सा जनजाति की महिलाएं जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में पुरुषों के समान भागीदारी कर रही हैं और स्वयं निर्णय लेने में सशक्त हो रही हैं लेकिन फिर भी इन महिलाओं की संख्या काफी कम है। आज भी बहुत से परिवारों में रुढिवादिता या परम्परा के कारण लिंग भेद के आधार पर महिलाओं को घर से बाहर कदम नहीं रखने दिया जाता। महिलाओं के स्वयं के निर्णय नहीं होते वे अपने पतियों के हाथ की कठपुतली बनी रहती हैं। जैसे उनके घर के पुरुष कहते हैं वे वैसे ही निर्णय लेती हैं। इस प्रकार आरक्षण प्राप्त होने व सरकारी योजनाएं होने पर भी महिलाएं स्वयं निर्णय निर्माण नहीं कर पा रही हैं।

मुख्य शब्द : सहभागिता, जनजाति, राजनैतिक, अशिक्षा, सशक्तिकरण, आर्थिक कल्याणकारी योजनाएं, पंचायतीराज।

प्रस्तावना

आधुनिकीकरण के दौर में प्रत्येक समाज आज आधुनिक जीवन शैली को अपनाना चाहता हैं, इसीलिए भारतीय समाज परिवर्तन की तेज गति से होकर गुजर रहा हैं, जिससे समाज के परम्परागत ढॉचे में क्रान्तिक्रारी परिवर्तन हो रहे हैं। यद्यपि भारतीय समाज जहॉ एक और पुरूष प्रधान समाज रहा हैं, वही दूसरी और परम्परावादी समाज भी रहा है। इन दोनो व्यवस्थाओं ने महिलाओं के जीवन में अनेक संकीर्णताओं को जन्म दिया जिसके फलस्वरूप महिलाओं का जीवन दयनीय होता चला गया।

उत्तराखण्ड के उधमसिहंनगर जनपद के बाजपुर विकासखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली बुक्सा जनजाति की महिलाऍ आज भी अपने परम्परागत जीवन के रहन सहन, रीति–रिवाज, संस्कृति को अपनाना पसन्द करती हैं, साथ ही साथ आधुनिक जीवन के तौर–तरीकों को भी अपने जीवन में आत्मसात करने के लिए प्रयत्नशील एवं संघर्षशील हैं। बुक्सा जनजाति समाज की महिलाऍ क्रेन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं से आज भी अनभिज्ञ सी प्रतीत होती हैं। इसका कारण इस समाज की महिलाओं का अशिक्षित होना रहा हैं।

यद्यपि वैदिक काल से लेकर आज तक की यात्रा में सरकारी प्रयत्नों, सामाजिक विधानों एवं समाज सुधारकों के आन्दोलनों का सतत् प्रयास जुड़ा हुआ हैं। आज महिलाएं सामाजिक, व्यावसायिक, प्रशासनिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में पुरूषों के समान ही आगे बढ़ती जा रही हैं। आज वे कुशल व्यवसायी, इंजीनियर, डॉक्टर, प्रोफेसर, वैज्ञानिक एवं नेता के रूप में शिखर पर पहुँच रही हैं। लेकिन बुक्सा जनजाति समाज की महिलाऍ आज भी मजदूरी करती हुई नजर आती हैं। बुक्सा जनजाति समाज की महिलाओं में परिवर्तन एवं विकास मिथक सा प्रतीत होता हैं।

वर्तमान समय में नगरीकरण, औद्योगिकीकरण, आधुनिकीकरण तथा आर्थिक विकास की प्रकिया ने ग्रामीण परिवार की संरचना तथा प्रकार्य को निश्चित रूप से प्रभावित किया हैं। परिवार पश्चिम की भौतिकवादी एवं उपभोक्तावादी संस्कृति से प्रभावित हुआ हैं और लोगो में परिवारात्मकता के

स्थान पर व्यक्तिवादिता बढ़ी हैं। भारतीय ग्रामीण परिवारों में मूल्यों के उभरते हुए इन प्रतिमानों ने पारस्परिक परिवारों की संरचना एवं इसके सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, मूल्यों तथा विचारों को भी प्रभावित किया हैं। ग्रामीण समाजों के विकास के लिए सरकार द्वारा कई विकासात्मक कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं जिससे समाज की आर्थिक स्थिति को मजबूती प्राप्त हो और बेहतर स्वास्थ्य एवं शिक्षा के लिए सरकार द्वारा योजनाएं बनायी गयी हैं। ग्राम पंचायत के तहत सरकार द्वारा ए0 पी0 एल0, बी0 पी0 एल0, अन्त्योदय कार्ड की व्यवस्था की गई हैं लेकिन स्वास्थ्य की दृष्टि से बुक्सा जनजाति के गांवो में स्वच्छ पीने के पानी की उपलब्धता व शौचालय की उपलब्ध सुविधा भी अच्छी नहीं हैं। आज निर्धनता एक प्रमुख सामाजिक समस्या है। भारत की समस्याओं में निर्धनता सबसे गम्भीर समस्या मानी जाती है इससे बुक्सा जनजातीय समाज व उस समाज की महिलाएं भी अछूती नहीं है। भारत में नगरीय क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता अधिक है। ग्रामीण विकास की विभिन्न योजनाओं हरित क्रान्ति, भूमि सुधारों आदि का लाभ पहले से सम्पन्न ग्रामवासियों को मिल पा रहा है। समाज के निम्नतम वर्ग, जिन्हें सामाजिक–आर्थिक सहायता की सबसे अधिक आवश्यकता है, वे ग्रामीण विकास की इन योजनाओं के लाभों से पूरी तरह वंचित ही हैं। भारत की योजनाओं में जनजातीय समाज की महिलाओं के लिए लघु उद्योग क्षेत्र में उद्योगों की संख्या में वृद्धि करके निर्धनता को दूर करने का प्रयास सरकार को करना चाहिए। बुक्सा जनजाति की महिलाओं को शिक्षा, प्रशिक्षण प्रदान कर समाज की मुख्य धारा से जोड़ा जा सकता है। इस शोध पत्र में बुक्सा जनजाति समाज की महिलाओं में परिवर्तन एवं विकास के मिथक को प्राथमिक सर्वेक्षण के आधार पर बाजपुर विकासखण्ड में उजागर किया गया है।

जनजातीय साहित्य

जनजातीय अध्ययन से संबंधित साहित्य की संख्या काफी अधिक है, जो भारत की विभिन्न क्षेत्रों की विभिन्न जनजातियों से एवं सामाजिक विज्ञान की विभिन्न शाखाओं से संबंधित है, जिन्हें एक साथ प्रस्तुत करना संभव नहीं है और ना ही अनुसंधान के लिए प्रकार्यात्मक ही है। भारत में आजादी के पूर्व के इतिहास पर दृष्टिपात से यह ज्ञात होता है कि जनजातीय अध्ययन अंग्रेजों द्वारा भारत के संपूर्ण क्षेत्र एवं सामाजिक परिस्थितियों के बारे में ज्ञान प्राप्त करने हेतु बीसवीं सदी के प्रथम दशक में करवाया ताकि अंग्रेजी शासन को सुदृढ़ किया जा सके। वर्ष 1901 में रिजले द्वारा प्रकाशित "भारत की जनगणना" प्रतिवेदन एवं वर्ष 1903 में प्रकाशित रिजले की "भारत के लोग" सर्वप्रथम प्रकाशित अध्ययन है। रिजले भारतीय जनजातियों के संबंध में विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने वाले प्रथम अध्येता हैं। उनके पश्चात विभिन्न भारतीय जनजातियों के भौगोलिक विवरण, जनसंख्यात्मक स्थिति तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का विस्तृत विवरण करने वाले मानवशास्त्रियों में बैनर्जी (1961), सिंह (1972), बोस (1978), चट्टोपाध्याय (1978) एवं गिल्बर्ट के अध्ययन प्रमुख हैं।[1]

मानवशास्त्रियों के अतिरिक्त अनेक समाजवैज्ञानियों ने जनजातीय जीवन के विभिन्न पहलुओं एवं उनमें हो रहे परिवर्तनों का अध्ययन किए हैं–सहाय (1963)[2] ने बिहार की ओराँव जनजाति पर ईसाई धर्म के प्रभाव का अध्ययन किया है। प्रसाद (1968)[3] ने पहारिया के पालमू क्षेत्र में जीवन की कठिनाइयों का वर्णन किया है। सहाय (1968)[4] बिहार की हिलमिलर एवं संथाल जनजातियों के मध्य नेतृत्व का अध्ययन किया है। सच्चिदानंद (1969)[5] ने बिहार के रांची जिले में निवास करने वाले ओरांव और मुंडा जनजाति के सदस्यों पर शहरीकरण के प्रभाव का अध्ययन उनकी संस्कृति में आए हुए परिवर्तन को ज्ञात करने हेतु किया है।

एरावती कर्वे तथा हेमलता आचार्य (1970)[6] ने पिछड़े वर्गों के साप्ताहिक बाजार की समीक्षा की व ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बाजारों में तुलनात्मक अध्ययन किया, साप्ताहिक बाजारों का मुख्य कार्य ऐसी स्थिति निर्मित करना जहां विक्रय हो सके, परंतु बाजार एक ऐसा स्थान है जहां वे एक दूसरे से मिलते और विचारों का आदान–प्रदान करते हुए मनोरंजन भी करते हैं, ऐसे स्थान साप्ताहिक बाजार बन जाते हैं। इस प्रकार पिछड़े वर्गों और ग्रामीण क्षेत्रों में ये साप्ताहिक बाजार सम्पर्क सूत्र और दूरसंचार का कार्य करते हैं।

राजेंद्र सरकार (1972)[7] ने मिर्जापुर के भक्तों के आविर्भाव का उद्भव बताया है। यह माना जाता है कि आदिम वर्ग की एक महिला ने आंदोलन चलाया, जिससे आध्यात्मिक प्रकाश मिला, उसके अनुयाई भगत के नाम से जाने जाते हैं, उन्होंने रक्त बलिदान को त्याग दिया, साथ ही तंत्र–मंत्र, जादू टोना छोड़ दिया, पवित्रता और सादगी पर जोर दिया, ये भगत समुदाय स्वयं को उच्च मानते हैं एवं गोड़ों को अभक्त मानते हैं और इनके साथ में भोजन एवं वैवाहिक संबंध नहीं रखता। विद्यार्थी (1973)[8] ने सांस्कृतिक विभिन्नता वाली 6 जनजातियों में नेतृत्व की प्रक्रिया का अध्ययन किया है। आर.आर. सिन्हा (1973) ने मुंडा एवं बलागी (उराव) के सामाजिक संरचना का तुलनात्मक अध्ययन किया है। मुखर्जी (1973)[9] ने पालामऊ जनजातीय समूह के लोगों का अध्ययन किया है। उन्होंने पाया कि इनमें आदिम जनजातीय नियम, गुण तथा मान्यताएं आज भी इनके सांस्कृतिक जीवन में परिलक्षित होती हैं।

ए.आर.एन.श्रीवास्तव (1975)[10] ने जनजातीय परिवारों का आर्थिक स्थिति तथा परिवार की विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करने के लिए यह प्रारूप विकसित किया है। इसके आधार पर इन्होंने स्पष्ट किया है कि परिवार की आधारभूत समस्यायें विभिन्न आर्थिक पहलुओं से प्रभावित होती हैं।

कोठारी (1976)[11] ने राजस्थान में भील जनजाति के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन में हो रहे परिवर्तनों की प्रक्रिया स्पष्ट करने का प्रयास किया है तथा परिवर्तनों के लिए उत्तरदायी कारणों की विवेचना करते हुए हिंदुओं से संपर्क विकास कार्यक्रम, यातायात के साधनों के विस्तार, शिक्षा, स्वास्थ्य सुधार के साधनों एवं राजनीतिक व्यवस्था से सामाजिक, सांस्कृतिक ढांचे में हुए परिवर्तनों के प्रकारों को स्पष्ट करने के लिए

सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न सिद्धांतों के आधार पर सैद्धांतिक ढाँचा प्रस्तुत किया है। एम.के.गौतम (1977)[12] ने संथाल जनजाति की सामाजिक संरचना, उनके पर्यावरण, आंतरिक व्यवस्था, परिवार संबंध, वैवाहिक नियम, जीवन संघर्ष एवं विवाह, विश्वास और धार्मिक आदि विषय की विशद विवेचना की है। उन्होने स्पष्ट किया है कि संथाल जनजाति में राजनीतिक चेतना तीव्रता से आयी है, बढ़ती हुई कीमतों, भ्रष्टाचार, सामाजिक परिस्थिति दशाओं, विशेषकर पड़ोसी समुदायों के कारण विवश हुए। अब वे अपनी विशिष्ट पहचान बनाने हेतु प्रेरित हुए। हिंदू परंपराओं के आदर्शों और जाति के विचारधारा से हटकर, उन्होंने स्वयं की परंपराओं और रीति–रिवाजों को महत्व देना प्रारंभ किया और स्वयं की रचनाओं और कृतियों को महत्व देकर उसे विकसित किया। एस.पी.रावत (1979)[13] उड़ीसा के जिला सुन्दरगढ़ पौरी बुन्धिया जनजाति के परिवारों की नातेदारी व्यवस्था का अध्ययन किया है। अध्ययन में व्यक्त किया गया है कि दो परिवारों के बीच वैवाहिक संबंध स्थापित करने में समुदाय द्वारा मान्यता प्राप्त युवक युवतियों की संस्था "घोटुल" की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। घोटुल द्वारा स्थापित संबंधों को गांव के मुख्या तथा बड़े बुजुर्गों एवं रिश्तेदार सामाजिक मान्यता प्रदान करते हैं।

एल.पी.विद्यार्थी (1981)[14] ने बिहार के ओरांव जनजाति की जनसंख्या व्यवस्था, शारीरिक बनावट और अर्थव्यवस्था का अध्ययन किया तथा कहा कि इनकी अर्थव्यवस्था कृषि और वनों पर आधारित है। इसके अतिरिक्त उन्होंने ओरांव के सामाजिक संगठन, गोत्र, विवाह व्यवस्था एवं मार्गाधिकार को वर्गीकृत किया है। इन्होंने इस बात पर बल दिया कि सांस्कृतिक परिवर्तन का प्रथम कारण पिछले शताब्दियों में सीधा संबंध और उसके बाद इसाई मिशनरियों के ब्रिटिश नियम ने, पश्चिमीकरण की प्रक्रिया को बल मिला, शिक्षा, निश्चित मूल्य और नैतिकता सूत्र थे। औद्योगीकरण एवं सामुदायिक विकास कार्यक्रम ने आदिम लोक जनसंख्या, उनकी परंपरागत जीवन जीने के तरीके को परिवर्तित करने में बहुत अधिक प्रभाव छोड़ा है। उन्होंने यह निष्कर्ष दिया कि ओरांव आज मुख्यतः परसांस्कृतिक और अनुकूलन करने वाली मध्य भारत की जनजाति है, जो नगरीकरण, औद्योगीकरण और आधुनिक जीवन के प्रजातांत्रिक प्रयोगीकरण की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं।

सिंह (1989)[15] की मान्यता है कि विकास की विभिन्न योजनाओं ने आदिवासी जनजीवन को प्रभावित किया है। जिनके फलस्वरूप धनुष बाण धारण करने वाला आदिवासी सभ्यता के नवीन परिवेश से परिचित हुआ है। आर्थिक सुरक्षा, पर्यावरण की सुरक्षा, लघु स्तर पर उद्योगों की स्थापना द्वारा जनजातीय विकास की तीव्रता को बढ़ाए जाने की संभावना विद्यमान है। व्यास (1989)[16] ने जनजातीय सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन से संबंधित भौतिक मूल्यों की सुरक्षा करने हेतु विकास योजनाओं को उन तक पहुंचाने पर जोर दिया है। नगला (1989)[17] ने सामाजिक दृष्टि से विकास का अर्थ समझाते हुए बताया कि जनजातियों के विकास हेतु उनके दृष्टिकोण में इस प्रकार परिवर्तन लाना होगा कि वे नए कौशल, व्यवहार एवं जीवन विधि अपनाने को तैयार हो तथा उनके सांस्कृतिक ढांचे में भी इस प्रकार परिवर्तन करना होगा कि योजनाओं का लाभ उठाकर वे अपना जीवन स्तर को ऊंचा उठा सकें। उन्होंने जनजाति विकास के विभिन्न कार्यक्रम के मार्ग में आने वाली बाधाओं का उल्लेख करते हुए कार्यक्रमों की सफलता हेतु जनजाति जीवन के सांस्कृतिक मूल्यों एवं भावनाओं को उनके निकट संपर्क द्वारा समझ कर कार्यक्रम बनाए जाने का सुझाव दिया। रायवर्मन (1992)[18] ने आदिवासी विकास के उचित मूल्यांकन एवं विकास नीति की सही व्यूह रचना के लिए आवश्यक विषयों जैसे वितरण व्यवस्था, व्यवसायिक प्रतिमान शिक्षा एवं शहरीकरण के प्रतिमान आदि पर विचार व्यक्त किए हैं। उनके अनुसार विकास की नवीन नीतियां आदिवासियों की सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक स्थिति से अनभिज्ञ रहते हुए बनाए जाने के परिणाम स्वरुप आदिवासी अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक जीवन पर उनका विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। शाह (1992)[19] के मतानुसार जनजाति समाज में उभरता मध्यमवर्ग समस्त विशिष्ट सुविधाओं को ग्रहण कर रहा है, जिसके कारण शेष में ईर्ष्या एवं ज्वैलसी की भावना पनप रही है।

चौधरी (1992) ने बिहार की सूर्या और पहाड़ियाँ जनजाति की पारंपरिक सामाजिक आर्थिक मूल्य व्यवस्था के संदर्भ में विकास का मूल्यांकन किया है। मालिनी श्रीवास्तव (2007)[20] ने झारखंड के रांची जिले के चार मुंडा गांव दौगदा, बुरुमा, सर्वदा और कुलीपीड़ी को चुना। उन्होने बताया कि पवित्र प्रस्तुति के चार पवित्र केंद्र सरना, ससनादिरी, अंखर, जादुर अखरा है। वे मुख्यतयाः देवी देवता और पूर्वजों को पवित्र प्रस्तुति (पूजा) देते हैं, उनकी पूजा लाल चावल और फूल से होती है। ये स्वास्थ्य तथा खुशी लाने हेतु पूजा करते हैं। इसके अतिरिक्त शिकार त्यौहार भी होता है, जिनमें फागु, बिसु, सिकरोर, रोगाहारी, मागेपरब, बा परब, बटौली आदि मुख्य हैं। निष्कर्षतः उन्होने कहा कि नगरीकरण और औद्योगीकरण के परिवर्तन के बावजूद भी मुंडा परम्परागत धर्म, मूल्य और संस्कृति को सुरक्षित रखे हुए हैं।

एन.के.दास[21] ने अपने लेख में धार्मिक समन्वय एवं सांस्कृतिक विविधता को भारत के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न समुदायों के संदर्भ में विश्लेषित कर समझने का प्रयास किया है। उन्होंने कहा है कि सांस्कृतिक विविधता और समन्वयवाद भारतीय सभ्यता को आधार प्रदान करते हैं, जिनमें दलित और आदिवासियों में समन्वयवाद के तौर–तरीके अधिकाधिक रूप में विद्यमान है। राहुल अशोक कांबले ने अपने लेख में उपनिवेश काल से लेकर वर्तमान समय तक जनजाति की अवधारणा के प्रारूप का वर्णन किया है एवं तत्कालिक भारत में जनजाति को विश्लेषित किया है। उन्होंने कहा कि मानव शास्त्रियों के अध्ययन उपनिवेश काल से लेकर वर्तमान तक जनजाति के तीन अलग–अलग प्रारूपों का अनुसरण किया है–प्रथम उपनिवेशी प्रारूप जो पृथक्कृत और असभ्य जीवन जीने वालों के लिए, दूसरा हिंदू सामाजिक श्रेणी की उपव्यवस्था के अर्थ में, तीसरा समस्तरीय समुदाय के अर्थ में भारतीय संदर्भ में समझा जा सकता है।

विनय कुमार श्रीवास्तव (2010)[22] ने अपने लेख "सोशियो इकोनॉमिक करैक्टरस्टिक्स ऑफ ट्राइबल कम्युनिटीज दैट आल देम सेल्फ हिंदू" में यह स्पष्ट किया कि टोडा, बदगा, कुरुम्बा तथा कोटा जनजाति में हिंदुओं की विशेषता देखने को मिलती है, इनमें सहजीवी अंतर्संबंध है एवं यह जजमानी व्यवस्था का एक गुण है और यह विशेषता जाति व्यवस्था की है। यह विभिन्न व्यवसायों में विशेषज्ञ हैं और अपने उत्पादों का विनिमय करते हैं। टोडा पशुचारणीक है, बदगा किसान हैं, करुत्बा जादूगर एवं कोटा कलाकार एवं संगीतकार हैं। यह प्रारूप हिंदू सामाजिक संगठन का प्रारूप है। बदगा बाहरी जनजाति है (मैसूर से आए हैं) उन्होंने यह स्थापित किया की जनजातियों में स्तरीकरण पाया जाता है, जैसे–गोड़, जिसे राजगोड़ कहते हैं। इनका अपना राज्य 19वीं शताब्दी में था। जिनमें गाय और बछड़े की पवित्रता को लेकर, उन्होंने पाया की यह क्षत्रिय परंपरा है जो जाति व्यवस्था का एक भाग है।

विभा अरोरा (2011)[23] ने अपने लेख में सिक्किम के लेप्चा जनजाति के पर्यावरणवाद और देशीयता के गठन का विश्लेषण क्या है। उन्होंने बताया कि लेप्चा जंगल में निवास करने वाले, प्रकृति उपासक और एक देशीय वास्तुकार है, वे अपने घर और आने जाने के लिए पुल का निर्माण लकड़ी से स्वयं करते हैं। 19वीं और 20वीं शताब्दी में अंग्रेज अधिकारियों और यात्रियों के अनुसार लेप्चा प्रथम पर्यावरणवादी हैं। रवि शंकर सहाय (2011)[24] ने अपने लेख में झारखंड के सांस्कृतिक प्रतिमानों का अध्ययन किया है, उनका उद्देश्य संस्कृति संरुप की प्रकृति को ज्ञात करना रहा है, इसके अतिरिक्त प्रागैतिहासिक सामुदायिक भूमि व्यवस्था के सत्याभाषी कारणों की चर्चा की है। सुभाष चंद्र वर्मा (2011) ने अपने लेख "द इको फ्रेंडली थारु ट्राइब : ए स्टडी इन सोशियो कल्चर डायनामिक्स" में थारू जनजाति की संस्कृति और प्रकृति में सभ्यता का विश्लेषण किया है। उन्होंने स्पष्ट किया कि उनकी समग्र संस्कृति 'सोच एवं गतिविधि' प्रकृति के साथ गहराई से जुड़ी हुई है, उनके आवास, भोजन, वस्त्र, कला, धर्म, अर्थव्यवस्था एवं अन्य जीवन के भाग पर्यावरणीय संतुलन और प्रकृति पर आधारित है। वे जनजातीय देवताओं के उपासक हैं। उनके समुदाय में परिवार व्यवस्था अच्छी है, महिलाओं की प्रतिष्ठा उच्च है, आर्थिक और सामाजिक अधिकार काफी हैं, यद्यपि समुदाय पितृ सत्तात्मक हैं लेकिन उनमें महिलाओं की प्रस्तुति उच्च है। थारु युवा आधुनिकता के लिए प्रयत्नरत है, थारुओं के क्षेत्र में बहुत से समुदाय व्यवसाय कर रहे हैं एवं औद्योगिकीकरण को बढ़ावा मिला है, जिसमें सांस्कृतिक आदान–प्रदान क्षेत्र के युवाओं को उपभोगी जीवनशैली आकर्षित कर रही है। वे अपने परंपरागत संस्कृति को नजरअंदाज कर रहे हैं, जिससे उनकी सांस्कृतिक पहचान को खतरा है।

रसेल हीरालाल (1916)[25] सर्वप्रथम मध्यप्रदेश की जनजातियों का क्रमबद्ध विवरण चार खंडों में प्रकाशित "कस्टम एंड ट्राइब्स इन सेंट्रल प्रोविंसेज" नामक पुस्तक में किया है इसके पश्चात हुए मध्यप्रदेश की जनजातियों पर हुए उपयोग अध्ययनों का पुनरावलोकन प्रस्तुत किया है। मावर (1960) ने मध्यप्रदेश के मंडला जिले की आदिवासी महिलाओं की प्रस्तुति को मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

बहादुर एवं दुबे (1967)[26] ने मध्य प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों का अध्ययन चार भौगोलिक क्षेत्रों में बांटकर उनके आदिवासी क्षेत्रों के विषय में सही तथ्य प्रस्तुत करने, सभी जनजातियों का पता लगाकर उनकी स्पष्ट छवि प्रस्तुत करने, जीवन की समस्याओं को ज्ञात करने, आर्थिक सामाजिक का वर्णन एवं जीवन यापन के विकास स्तर की दिशा ज्ञात कर गैर आदिवासियों से अंतर करने के उद्देश्य से किया है तथा यह निष्कर्ष दिया कि यद्यपि संपूर्ण राज्य ही विकास की दृष्टि से पिछड़ा है तथापि अन्य क्षेत्रों की तुलना में जनजातीय क्षेत्र अधिक पिछड़े हैं एवं आदिवासी तथा गैर आदिवासी लोगों के विकास की दृष्टि से काफी अंतर है। अरोरा (1972)[27] ने मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के अलीराजपुर के निवासी भिलाला लोगों की जीवन संस्कृति पर अपने विचार प्रस्तुत किए। उन्होंने उनके क्षेत्रीय समुदायों के राजनीतिक विकास, आर्थिक जीवन और सांस्कृतिक क्षेत्रों में किए गए प्रगति का उल्लेख किया है। उन्होंने इस ओर भी संकेत किया है कि पिछड़े वर्ग का भिलाला जाति समूह किस प्रकार परिवर्तन का सामना करने में सक्षम हुआ है। अली (1973)[28] ने मध्यप्रदेश की जनजातियों की जनानंकिकी स्थिति का विवरण, जनजातियों का सामान्य विवरण, क्षेत्रानुरुप स्थिति, आयु संरचना, लिंग संरचना एवं वैवाहिक स्थितियों के आधार पर प्रस्तुत किया है। जोशी (1982)[29] ने मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के जनजातीय क्षेत्र में कृषि के विकास में विकास खंडों की भूमिका ज्ञात करने हेतु अध्ययन किया है। इस अध्ययन में विभिन्न विकासखंडों के चयनित 20 ग्रामों से सम्बन्धित आंकड़े एकत्रित कर "स्थानिक विकास सिद्धांत" पर आधारित विकास केंद्र से निकटता और कृषि विकास स्तर का धनात्मक सार्थक संबंध होने की प्रस्तावित उकल्पना को असत्य सिद्ध किया है। इससे यह स्थापित हुआ कि आदिवासी विकास हेतु विकासखंड से निकटता दूरी का विशेष महत्व नहीं है, अपितु व्यक्तिगत स्थिति विशेषकर शासकीय कार्यक्रमों से लाभान्वित होने हेतु राजनैतिक पहुंच तथा सामाजिक आर्थिक स्थितियां प्रभावशाली होती हैं।

रायजादा (1985)[30] ने आदिवासी विकास का अध्ययन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में करते हुए पाया कि मध्यकालीन राजनीतिक घटनाक्रमों के परिणाम स्वरुप भारत की मूल जातियों ने आत्म संरक्षण हेतु बाह्य शक्तियों से संघर्ष करते हुए जंगलों में शरण ली और फलस्वरूप मुख्यधारा से अलग पड़ गए। ब्रिटिश शासन काल में विभिन्न अधिनियमों द्वारा प्रशासनिक दृष्टि से इनके साथ बिलगाव की नीति अपनाई गई। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत शासन ने आदिवासी हितों के संरक्षण हेतु संवैधानिक प्रावधानों के उपरांत कल्याणकारी कार्यक्रमों को लागू किया।

पांडेय (1986)[31] ने मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के जनजातीय क्षेत्रों में कृषि के विकास में विकास कार्यक्रमों को तथा जनजाति विकास खंडों की भूमिकाओं एवं उनके क्षीण प्रभावों को जानने हेतु अध्ययन किया तथा निष्कर्ष

दिया कि आदिवासियों के पास गैर आदिवासियों की तुलना में कम भूमि, कम उपजाऊ भूमि तथा कम संसाधन है एवं कृषि विकास का स्तर निम्न है, जिससे 70 प्रतिशत आदिवासी किसी से जीविका निर्वाह नहीं कर पाते हैं। कृषि अधिकारी से आदिवासी सहायता नहीं लेते एवं नहीं उन्नत कृषि विधियों को अपनाते हैं। आधे खेतिहर मजदूर काम की तलाश में प्रवासी हो जाते हैं, जिससे रवि की फसल पर दुष्प्रभाव पड़ता है। समस्त बाजार एवं संस्थाएं गैर आदिवासियों के नियंत्रण में होने तथा कृषि में कम उपज के कारण ऋणग्रस्तता है। नियोजित व्यय के रूप में किया गया विनियोजन उपभोग के रूप में प्रयुक्त कर लिया जाता है अथवा शासकीय कर्मचारियों या स्थानीय व्यापारियों द्वारा व्यय कर लिया जाता है।

पटेल एवं वैष्णव (1988)[32] ने मध्य प्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में परिवार नियोजन संबंधी तुलनात्मक अध्ययन किया है। आदिवासियों में मृत्युदर तथा शिशु जन्म दर ज्ञात करने, सामाजिक व आर्थिक स्थिति पर प्रभाव देखने, परिवार नियोजन के प्रति आदिवासियों की धारणाएं ज्ञात करने तथा नसबंदी पर प्रतिबंध की आवश्यकता को समझने के उद्देश्य से किया है। इन्होंने निष्कर्ष निकालते हुए कहा की नसबंदी प्रतिबंधित क्षेत्र के परिवारों में औसतन एक बच्चा अधिक आवश्यक है। प्रतिबंधित एवं विहिन दोनों प्रकार के परिवारों की आर्थिक स्थिति निम्न है। कम आयु में विवाहों के कारण शिशु मृत्यु दर अधिक है। आदिवासी कम से कम चार पांच बच्चे चाहते हैं क्योंकि वे 10 साल की आयु से पारिवारिक कार्यों में सहायक बन जाते हैं। कमार और भारिया दोनों ही जनजातियों के पुरुष परिवार नियोजन हेतु नसबंदी को इस असत्य धारणा के कारण नहीं अपनाते हैं की नसबंदी के पश्चात पेड़ों पर चढ़ना एवं अधिक परिश्रम करना संभव नहीं है। इस प्रकार नसबंदी निषेध का कोई प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं हुआ है। बैनर्जी एवं भाटिया (1988)[33] ने मंडला जिले के बहांगा ग्राम के गोंड जनजाति का जनांकिकी अध्ययन जन्म दर, मृत्यु दर, वृद्धि दर एवं उनके कारणों तथा परिवार नियोजन कार्यक्रमों को जानने हेतु 69 परिवारों के 474 व्यक्तियों के लिए अनुसूची के माध्यम से एकत्रित आंकड़ों के आधार पर किया है। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि गोंड जनजाति में एकांकी परिवारों का बाहुल्य है, परिवार का आकार सीमित (5–6 व्यक्ति की संख्या) है,लिंगानुपात काफी कम (789) है, विवाह निकट के ग्रामों में ही होते हैं एवं उनकी विवाह की आयु वैधानिक आयु से 2 या 3 साल कम होती है, जन्म दर देश एवं प्रदेश की जन्म दर से अधिक मृत्यु दर अधिक एवं शिशु मृत्यु दर बहुत अधिक है तथा शिक्षा के अभाव में परिवार नियोजन को आधे से कम लोगों ने ही अपनाया है। टेखरे (1989)[34] ने मध्यप्रदेश में छिंदवाड़ा जिले के पातालकोट के जनजाति क्षेत्र में आदिवासी महिलाओं और परिवार नियोजन कार्यक्रम का अध्ययन किया इस अध्ययन में आदिवासी महिलाओं के परिवार नियोजन संबंधी विचार ज्ञान अभिमत ग्रहण एवं लाभ संबंधित विभिन्न बाधक एवं सहयोगी तथ्य प्राप्त किए गए उन्होंने पाया कि सामान्य प्रचार एवं ज्ञान तथा समर्थक की कमी के बावजूद ग्रहण तथा लाभ का उच्च स्तर होने के कारण बाह्य सहायक तत्वों को जिनमें शासकीय कार्यक्रम के कार्यकर्ताओं का दबाव मुख्य उत्तरदाई ठहराया गया है। चौहान (1990)[35] ने मध्य प्रदेश के बस्तर जिले (जो वर्तमान में छत्तीसगढ़ में है) में आदिवासी महिलाओं की परिस्थिति और सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन किया। उनके अनुसार महिलाओं की सामाजिक स्थिति एक तुलनात्मक अवधारणा है, एवं आदिवासी महिला की प्रस्थिति को उसी समाज में पुरुष की या गैर आदिवासी समाज में महिला परिस्थिति के तुलनात्मक रूप में समझा जा सकता है। अतः इस अध्ययन में महिलाओं की "प्रस्थिति" को आदिवासी समाज में सामाजिक विषयों पर महिलाओं की स्वतंत्रता की मात्रा, निषेधों के प्रकार, अर्थव्यवस्था में भूमिका, कानूनी और राजनीतिक स्थिति आदि सूचकों द्वारा नापने का प्रयास किया है तथा वर्तमान समय में यह प्रस्थिति किस प्रकार परिवर्तित हो रही है यह स्पष्ट किया है। उन्होंने पाया कि भारत के आदिवासियों में महिलाओं की स्थिति गैर आदिवासी महिलाओं की तुलना में उच्च तथा मात्रा मातृसत्तात्मक समुदाय में पितृसत्तात्मक समुदाय से है लेकिन कई जनजातियों का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि जनजाति पुरुषों की अपेक्षा निम्न है विकास के परिणाम स्वरुप उत्पन्न सामाजिक परिवर्तन से महिलाओं की परिस्थिति में अधोमुखी गतिशीलता देखने को मिल रही है,जिसका प्रभाव सामाजिक संरचना पर पड़ रहा है। आदिवासी औद्योगिक क्षेत्रों में मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समायोजन की भी समस्या विद्यमान है। शर्मा (1991) मंडला जिला की डिंडोरी तहसील में (वर्तमान में स्वयं एक जिला है) आदिवासी महिलाओं को विकास का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि आदिवासी स्त्रियों का नियम एवं संकुचित बौद्धिक स्तर होना बाल विवाह जैसी कुरीतियों, जादू टोने जैसी अंधविश्वास, व्यसन, आदतें, परंपराएं एवं उचित शिक्षा के अभाव में विभिन्न विकास कार्यक्रमों और उसके लाभों को न समझ पाना अपने को गैर आदिवासियों से हीन समझने की भावना, आवागमन के साधनों के अभाव के कारण क्रियान्वन में स्थूलता आदि कारण आदिवासी महिलाओं के विकास में बाधक हैं। करीरा (1995)[36] नटवारा ग्राम के गोंड़ परिवारों की आर्थिक एवं सामाजिक विकास का अध्ययन कर उनकी पारिवारिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का विश्लेषण किया है सिंह (1995)[37] ने मंडला जिले के जनजातियों में हो रहे सामाजिक परिवर्तन एवं विकास की स्थिति का मूल्यांकन क्या है इससे स्पष्ट होता है कि विकास की गति काफी धीमी है। मरकाम (1996)[38] ने नियोजित सामाजिक परिवर्तन के अंतर्गत विकास कार्यक्रमों का गोंड़ जनजाति पर प्रभाव का अध्ययन किया है। गोंड़ जनजाति के विकास के लिए जितना समय, धन एवं मानव शक्ति को लगाया जा चुका है उनको ध्यान में रखते हुए अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं हुई है।

जी.डी.पाण्डेय (1998)[39] ने "स्टडी ऑफ सोशल फैक्टर्स ऑन ह्यूमन फर्टिलिटी एंड फैमिली विद स्पैशल रिफ्रेंश टू मेजर प्रिमिटिव ट्राईब ऑफ एम.पी." के अंतर्गत शोध कार्य पातालकोट की भारिया, बिरहोर, पहाड़ी कोरबा और कमार पिछड़ी जनजाति के प्रजनन संबंधी व्यवहारों

पर सामाजिक कारकों के प्रभाव का विश्लेषण किया है तथा यह पाया कि जनजातियों में प्रजनन दर कम एवं मृत्यु दर अधिक है तथा जनसंख्या धीमी गति से बढ़ रही है। बालकृष्ण तिवारी 1999) ने सतना जिले में कोल जनजाति में सामाजिक, सांस्कृतिक कारणों का बीमारी और स्वास्थ्य देखभाल पर प्रभाव, उनके व्यक्तिगत स्वास्थ्य व्यवहार, स्वास्थ्य सेवाओं प्रसूत व शिशु देखभाल और परिवार समूह के व्यवहार के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन किया है। ज्योतिर्मय राय (1999)[40] ने सीधी जिले की खैरवार जनजाति के सांस्कृतिक पक्ष में उनके स्वास्थ्य एवं बीमारियों के प्रति व्यवहार, प्रजनन संबंधी व्यवहार और जन्म संबंधी गतिविधियों का विशेषण क्या है।

थान्गुमुलीयन, वेल्टे, एल्डोज के.मथाई, सीमन जॉर्ज (2008)[41] ने अपने अध्ययन "ए सोशियो लिंग्वेस्टिक सर्वे एमान्ग परधान कम्युनिटी ऑफ सेंट्रल इंडिया" के मध्य प्रदेश में परधान कौन सी भाषा का प्रयोग और कौन सी भाषा नकार रहे हैं, के उद्देश्य से किया है। उन्होंने निष्कर्ष दिया कि परधान गोंडी भाषा का प्रयोग करते हैं और उन्होंने और किसी भाषा को गोंड़ी में शामिल नहीं किया है। गुजरात की जनजातियों से संबंधित साहित्य–कोपर (1977)[42] ने गुजरात के जनजातीय जीवन में परिलक्षित आदिवासी संस्कृति के प्रशासनिक चुनौती मानकर विवेचन प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार इस राज्य के जनजातीय क्षेत्र में रहन–सहन हेतु कठिन प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण निरंतर संघर्ष करने वाली जीवन शैली जीने के कारण आदिवासियों का बौद्धिक विकास कम हो पाया है। जंगलों की अंधाधुंध कटाई ने आदिवासियों के पर्यावरण, भूमि की गुणवत्ता एवं जल की उपलब्धता को प्रभावित किया है, साथ ही नवीन कानूनों के कारण जंगलों पर उनके अधिकार समाप्ति से उनके जीवन यापन के स्रोत समाप्त होते जा रहे हैं। इस क्षेत्र में चार दशकों से विकास योजना के दोषपूर्ण क्रियान्वयन से अपेक्षानुरूप विकास नहीं हो पाया है। आदिवासी नवयुवक परंपरागत समाज से दूर जाकर अपनी लोक संस्कृति को नष्ट कर रहे हैं।

नायक, मसावी और पण्डवा (1979)[43] ने कोल्गा जो कम विख्यात समूह है, गुजरात के बलसाड़ और सूरत जिलों में व्यापक रूप से बसे हुए हैं, पर अपना एकांगी अध्ययन प्रस्तुत किया है, वे अन्य आदिवासी समूहों के साथ रहते हैं, उनमें से कुछ भू–स्वामी और अधिकांश कृषक मजदूर हैं, सभी लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करते हैं। लगभग 39 प्रतिशत लोग ऋणग्रस्त हैं। इन्होंने उनके सामाजिक संगठनों, आर्थिक जीवन, भौतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक जीवन पर विस्तार से प्रकाश डाला है।

पटेल एवं रामचंदानी (1989)[44] ने अपने लेखों में गुजरात के विभिन्न उद्योगों में जनजातीय परिवारों और उनकी समस्याओं तथा इन क्षेत्रों में विभिन्न प्रयासों के बाद भी गरीबी और बेरोजगारी की समस्याओं के विकराल स्वरूप का वर्णन करते हुए इनका प्रमुख दोष पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को ठहराया है। पटेल (1989)[45] ने गुजरात में आदिवासी महिलाओं में शैक्षिक विकास की स्थिति को प्रस्तुत किया है। स्वतंत्रता के उपरांत आदिवासियों की शैक्षिक स्थिति में सुधार के लिए विशेष प्रावधान किए गये हैं, परंतु आदिवासियों की शैक्षिक स्तिथि हरिजन महिलाओं से भी पिछड़ी हुई है। आदिवासियों में शिक्षा की नामांकन दर तो बढ़ी है, परंतु बीच में स्कूल छोड़ देने वालों की संख्या बहुत अधिक है, इसके लिए रुढ़िवादिता, पारिवारिक व्यवसाय या घरेलू काम में लड़कियों की मदद, कमजोर आर्थिक स्थिति, लड़कियों को पढ़ाने की परंपरा न होना जैसे कारण प्रमुख हैं। शिक्षकों की अनियमित उपस्थिति जैसी समस्याएं भी प्रभाव डालती हैं। जो लड़कियां शिक्षा ग्रहण कर रही हैं, उनके माता–पिता उन्हें पढ़ाकर नर्स, शिक्षिका, क्लर्क या सरकारी नौकरी दिलवाना चाहते हैं। सुरेश कुमार सिंह, राजेंद्र बहरी लाल (2003)[46] ने गुजरात के गामीत जनजाति के सामाजिक संगठन का विश्लेषण किया है। उन्होंने स्पष्ट किया कि गामीत जनजाति अंतर्विवाही है जो गोवाली, देसाई, कुवर, कुमार, बल्ली, मडवी आदि बहिर्विवाह गोत्रों में बँटी हुई हैं, गोत्रों के नाम देवी से जुड़े हुए हैं एवं सभी समान स्तर पर हैं, गामीत एक विवाही हैं लेकिन वे बहुविवाही होने का अभ्यास कर रहे हैं, फिर भी अधिकांश लोग एक विवाही हैं । अनीता परमार, अंकुर, वरुच, विपिन परमार, फ्रैंकलिन क्रिश्चियन, शीतला शुक्ला, वर्षा गांगुली (2007)[47] ने गुजरात में जनजाति पहचान और कानून पर अपना अध्ययन किया। जनजातीय पहचान को ज्ञात करने हेतु आंतरिक अभिव्यक्ति, आर्थिक कारक, राजनैतिक कारक, राज्य की विकास योजनाओं का जनजातियों पर प्रभाव, बाह्य जनजाति और आंतरिक जनजाति गत्यात्मक का तथा गैर जनजातियों के साथ अंतः क्रिया, जनजातीय कानून को जानने हेतु संवैधानिक कानून एवं परंपरागत जनजातीय कानून को आधार बनाया। उन्होंने पाया कि विकास कार्यक्रमों से राष्ट्र निर्माण में योग मिला है, किंतु इससे जनजातीय पहचान भाषा एवं संस्कृति खोती जा रही है, जो अमानवीय है, ऐसा इसलिए है क्योंकि सरकारी यांत्रिकी और जनजातीय कानून एवं संस्कृति में साम्य नहीं है, इसलिए सरकार को चाहिए कि विकास नीति निर्माण के समय यह ध्यान रखा जाए और स्वविकास का अवसर दिया जाए। शशिकांत कुमार (2009)[48] पूर्वी गुजरात में वन नीतियों का जनजातीय जनसंख्या पर प्रभाव का अध्ययन किया है। उन्होंने पाया कि वन संरक्षण अधिनियम 1952, 1980, 2006 जनजातियों के प्रथागत अधिकार, वन उत्पादन के प्रयोग को निशिद्ध किया, जिसे जनजातियां वैधता प्रदान नहीं करती। उन्होंने पाया कि परिवर्तित पर्यावरण परिवेश और स्रोतों के उपयोग का कोई रास्ता निकालना सरकार के लिए क्षेत्र और विश्व यह मांग करता है कि नवीन उभरती मांग का क्षेत्र में की जाए। मनीष कुमार एवं टी. एन.एन. (2011)[49] ने अपने लेख में बांस के व्यवसाय से जुड़े हुए गरीब लोगों उनके द्वारा किए जाने वाले उत्पादन, इससे प्राप्त आय, बाजार में अन्य उत्पादन को बाँस के उत्पादित वस्तु के विकल्प हैं, के मध्य तुलना किया है। गुरशरन सिंह कैनथ (2011)[50] ने अपने लेख में राज्य सरकारों द्वारा वन परिक्षेत्र में बाँस का व्यवस्थापन, वितरण, उपयोग करने वाले समूह का मूल्यांकन किया है, इसमें मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात और उड़ीसा को शामिल किया। उन्होंने बाँस के ह्रास को दो स्तरों में

विभाजित कर विश्लेषित किया है – प्रथम– लघु स्तर के उपभोक्ता जैसे क्षेत्रीय जनता, बाँस की कार्य करने वाली जातियां एवं अन्य अधिकारधारी। द्वितीय – दीर्घ स्तर के उपभोक्ता जैसे बाँस पर आधारित औद्योगिक इकाई। उन्होंने यह स्थापित किया कि लघु स्तर के उपभोक्ता के पक्ष में सरकार की वन नीति नहीं है, जबकि उनका अधिकार पहले है, बाद में किसी और का। निरगुणे (1986)[51] ने बैगा जनजाति की जीवन विधि एवं प्रकृति में अनुरूपता स्पष्ट किया है। कम संसाधनों में जीवन यापन करना, कम वस्त्र धारण करना, बेवर खेती, पशु पक्षियों का शिकार फंदे तथा तीर धनुष द्वारा करना, मांस, मछली, मद्यपान का सेवन तथा वनोपज पर निर्भरता इनके जीवन का महत्वपूर्ण केंद्र बिंदु है। परंपरागत वाद्य यंत्रों की थाप पर श्रृंगार युक्त महिला–पुरुषों का नृत्य विवाह हेतु मंडप, महिलाओं के शरीर पर अलंकृत गोदना, खेल पहेलियों एवं उत्सव द्वारा शिक्षा, बलि एवं पूजा द्वारा देवी देवताओं की आराधना शुभ अशुभ विचारों, लोकाचारों, कहावतों, हास–परिहास द्वारा सामाजिक नियंत्रण एवं व्यवस्थापन, परिवार की प्रकृति की ओर इन्होंने अत्यधिक ध्यान आकृष्ट किया है। साथ ही उत्सव को फसल एवं पितरों के सम्मान में, दशहरा को नृत्य वर्ष के रूप में, विवाह योग्य युवक युवतियों में जीवन साथी का चयन, दीपावली को दीप प्रज्जवलन तथा गायों को अन्य देने से, होली को अग्नि के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए शारीरिक बाधाओं से मुक्ति मिलने से ज्वारा या खेरमाई की पूजा को व्यक्तियों पर भाव (सवारी) आने के कारण सामुदायिक मस्तिष्क के संतुलन से जोड़कर देखा है। इसके साथ–साथ सामुदायिक विकास कार्यक्रमों, बाह्य समाज एवं शिक्षा का न्यूनतम प्रभाव व इसके कारणों की चर्चा की है।

एन शर्मा एवं पंकज द्विवेदी (2006)[52] में मध्यप्रदेश के डिंडोरी जिला के समनापुर गांव के बैगा जनजाति के सामाजिक जनांकिकी का कुछ प्रत्याशाओं को लेकर शोध पत्र प्रस्तुत किया है। अध्ययन की खोज यह संकेत करती है कि अधिकांशतया जनसंख्या अशिक्षित है एवं परिस्थितियों की यह मांग है कि संक्षिप्त शैक्षिक कार्यक्रम एवं जागरूकता कार्यक्रम उन्हें ऊपर उठाने एवं शैक्षिक स्थिति को ऊपर उठाने के लिए आवश्यक है। बैगा लोगों में जनन क्षमता व नैतिकता का उच्च स्तर विद्यमान है, जो यह संकेत करता है कि जनसंख्या में एक बड़ी संख्या निर्भर लोगों की है तथा कुछ परिवार कल्याण संस्थाओं की आवश्यकता है। उच्च नैतिक स्तर विभिन्न प्रकार की बीमारियों की घटना प्रदान करता है तथापि काफी मृत्यु के परिणाम प्रजनन के समय मिलता है। परिवार कल्याण की स्वीकार्यता बिल्कुल शून्य है। इस संबंध में ठोस कदम उठाए जाने की आवश्यकता है।

आर.ई.एन्थोवेन (1992)[53] ने अपनी पुस्तक में कोटवालिया जनजाति के संबंध में लिखा है कि कोटवालिया, विटोलिया, बरोडिया और बंसफोडिया यह चारों उपसमूह हैं एवं इनका नाम बॉस से जुड़े व्यवसाय के कारण समान अर्थों वाला है। कोटवालिया नाम, एक अंग्रेज अधिकारी को बॉस का बना कोट भेंट करने के कारण कोट वाला नाम पड़ा जो बाद में कोटवालिया प्रचलित हो गया। आर. जे. भट्ट एवं आर. के.शर्मा (1977)[54] ने संकेन्द्रीय अध्ययन में कोटवालिया जनजाति के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक व्यवस्था का विश्लेषण किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि यद्यपि बिटोलिया, वंसफोडिया, बरोडिया भी बाँस से जुड़े व्यवसाय से संलग्न हैं लेकिन वे कोटवालिया से अलग हैं, कोटवालिया अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में आती है।

रघुवीर बोरा एवं मुकुंद भाई चौधरी (1977)[55] में अपने अध्ययन में कोटवालिया जनजाति की उत्पत्ति, समूह–उपसमूह, शारीरिक और प्राकृतिक विशेषता का संक्षिप्त वर्णन किया है, इसके अतिरिक्त सामाजिक जीवन को समझने के लिए गर्भवती माता का बच्चे के जन्म के पूर्व आहार, नामकरण उत्सव, मुंडन संस्कार, मंगनी उत्सव, विवाह, तलाक तथा मृत्यु के प्रथा व रिवाजों को सतही ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, एवं पंचायत, पंचायत के कार्य, नामकरण, मंगनी, विवाह एवं तलाक आदि में पंचायत तथा पंचों की भूमिका को व्याख्यायित किया है। उन्होंने बताया कि कोटवालिया जनजाति की प्रथाएं रिवाज एवं पंचायत में अत्यधिक घनिष्ठ संबंध है एवं एक–दूसरे में समाहित व पूरक हैं। इसके अध्ययन का दूसरा पक्ष कोटवालिया का धार्मिक जीवन है जो अध्ययन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। उन्होंने कोटवालिया जनजाति के त्यौहार एवं देवताओं को भी उभारने का प्रयत्न किया है, उनमें प्रमुख देवता देवी–देवनी देवी, ग्वाल देव, हिनमारियो देव, काका बलिया प्रमुख देवी देवता है। भगत के साथ पवित्रता का भाव, विश्वास, कर्मकांड, जादुई क्रियाओं का निस्तारण, निष्पादन में भूमिका आदि का संक्षिप्त वर्णन किया है। कोटवालिया जनजाति में मनाए जाने वाले प्रमुख त्योहारों में होली, दिवाली तथा बाघ मेला आदि का भी संक्षिप्त वर्णन किया है। लोक त्योहारों, नृत्य लोक गीत, होली आदि गीतों का भी संक्षिप्त वर्णन किया है। आर्थिक व्यवस्था में – बांस की उपलब्धता, निकटवर्ती समुदायों के साथ संबंध, का उपयोग स्त्रोत आदि का भी संक्षिप्त वर्णन किया है। निष्कर्ष रूप में उन्होंने लिखा है कि इनकी आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय है व इनके जीवन में उल्लास की कमी दिखाई पड़ती है, जीवन मात्र जीने के लिए ही परिलक्षित होता है ।

एन. के. घटक (1997)[56] ने अपने लेख में कोटवालिया जनजाति की उत्पत्ति, जनसंख्या, आवास, भोजन, सामाजिक संरचना, आर्थिक व्यवस्था, बांस की उपलब्धता, बाजार के संबंध, पंचायत, प्रथा, परंपरा व सामुदायिक विकास कार्यक्रम के प्रभाव का संक्षेप में उल्लेख किया है। इनके लेख का प्रमुख प्रकाश सामाजिक संगठन पर रहा है, इन्होंने स्पष्ट किया कि कोटवालिया चार अन्तर्विवाही समूहों (कोटवालिया, बरोडिया, बसफोड़िया, विटोलिया) एवं चार बहिर्विवाही कुलों (गामीत, चौधरी, धोबी और नाई) में विभक्त हैं। कुल के सदस्य अपनी उत्पत्ति समान वंश से मानते हैं, सभी कुल समान स्थिति में है एवं संकट के समय एक दूसरे की सहायता करते हैं। वे राजपूत, कुनबी, कोली आदि से निम्न स्थिति पर हैं किंतु भंगी और चमार से उच्च स्थिति में तथा कोकना के समान स्थिति पर हैं । वे सामुदायिक स्तर पर अंतर्विवाही हैं और वे कुल अंतर्विवाह का अभ्यास कर रहे हैं।

हरीश दोषी (1998)[57] ने अपने लेख में कोटवालिया जनजाति के स्थानवार वितरण, भोजन, स्थिति, जन्म, विवाह स्वरूप, प्रकार, तलाक, आर्थिक व्यवस्था, पुरुष–महिला प्रस्थिति, मद्यपान, पंचायत, सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का प्रभाव तथा समस्याओं आदि पर संक्षिप्त प्रकाश डाला है। मुख्य रूप से उन्होंने यह प्रकाश में लाने की चेष्टा की है कि कोटवालिया हिंदू धर्म का अनुशरण कर रहे हैं और देवली मादी, पण्डार देव और काका बलिया (चेचक के देवता) की उपासना करते हैं। इनकी प्रमुख देवी देवली मादी है, उनके नाम से शपथ खाते हैं और बकरा मुर्गी चढ़ावे और अन्य पवित्र क्रियाकलाप किए जाते हैं। कोटवालिया जनजाति पर हिंदू धर्म का प्रभाव देखने को मिलता है। वे हिंदुओं के त्योहारों व देवताओं में अपने परंपरागत देवी–देवता की छवि देखते हैं और यह उनके जीवन जीने के तरीके में शामिल हो गया है तथा वे "दाबारू" जो उनका परंपरागत वाद्य यंत्र है, बजाकर भजन गाते हैं। जहां वे परंपरागत रूप से बांस के बने टोकरे, चटाइयां आदि बनाकर निकटवर्ती समुदाय से अनाज तथा आवश्यकता को सामान से आदान–प्रदान (वस्तु विनिमय) करते थे, वर्तमान में बांस के बने सामान बाजार के लिए बनाते हैं। बैगा एवं कोटवालिया दोनों ही जनजातियां अत्यंत पिछड़ी जनजातियों (आदिम जनजाति) की श्रेणी में आती है, दोनों की भौगोलिक परिस्थितियां भी भिन्न–भिन्न हैं। बैगा जनजाति से सम्बन्धित संरचनात्मक अध्ययन लगभग नगण्य है एवं कोटवालिया जनजाति पर अध्ययन भी नगण्य है।[58]

बुक्सा जनजाति

बुक्सा शब्द की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों/शोधकर्ताओं ने अनेक किवदन्तियों का उल्लेख किया। बोंक शब्द से बोक्सा तथा कालान्तर में बुक्सा शब्द का सम्बन्ध इस जनजाति के अप्रवास काल के सन्दर्भ में भी परिलक्षित होता है। इस सम्बन्ध में सबसे प्राचीन उल्लेख आइन–ए–अकबरी में मिलता है। जिसके अन्तर्गत अकबर के शासन के तराई क्षेत्र में बुक्सार क्षेत्र (वर्तमान में ऊधमसिंह नगर से किलपुरी क्षेत्र) का उल्लेख मिलता है। जिसे अकबर ने कुमाऊँ के राजा रूद्रचन्द को पंजाब के एक सफल युद्ध में अपनी वीरता प्रदर्शित करने के फलस्वरूप प्रदान किया था।[59]

उत्तर प्रदेश के नैनीताल, देहरादून, पौड़ी गढ़वाल एवं बिजनौर जनपदों का तराई क्षेत्र प्राचीन काल से ही बुक्सा जनजाति का निवास स्थान रहा है। शारीरिक बनावट के आधार पर एक औसत बुक्सा की औसत लम्बाई (5′ 4′′ से 5′ 8′′) लिये हुए तथा गठीले व मजबूत शरीर वाला दिखाई देता है। बुक्सा स्त्री व पुरूष दोनों ही के चमड़े का रंग, गेहुंवा या गहरा काला होता है। चेहरा चौड़ा, तिरछी आँखें, चपटी नाक, मोटे होंठ और काले बाल। मजूमदार (1944 : 37) ने मानवमितीय एवं रक्त परीक्षण के आधार पर बुक्सा जनजाति की थारूओं के ही समान मंगोल प्रजातीय उत्पत्ति को प्रमाणित किया है। अमीर हसन (1979 : 25) ने इन्हें सबसे अधिक हिन्दूकृत जनजातियों में से एक माना है।[60] अनेक प्रकार के अन्धविश्वास जादू–टोने भी बोक्सा जनजाति में प्रचलित है।[61] बुक्सा जनजाति की भाषा बुक्साडी है।[62] किन्तु अनेक समुदायों से सम्पर्क तथा इनके सांस्कृतिक विकास के साथ–साथ बुक्साडी भाषा के शब्दकोष में ब्रज, हिन्दी, उर्दू एवं कुमाऊँनी शब्दों का समावेश होता रहा है।[63] बोक्सा जनजाति को मुख्यतः 5 उपजातियों में विभक्त किया जा सकता है– 1. जदुवंशी, 2. पँवार, 3. परतजा, 4. राजवंशी, 5. तुनवार। इन सब उपजातियों में सगोत्रीय विवाह निशिद्ध है।[64]

शोध अभिकल्प एवं पद्धति शास्त्र

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य अन्वेषणात्मक है। अतः शोध पत्र हेतु इस अध्ययन में अन्वेषणात्मक एवं विवेचनात्मक शोध अभिकल्प का उपयोग किया गया है । अतः अध्ययन के अन्तर्गत ऊधमसिंह नगर जनपद के बाजपुर विकास खण्ड में निवास करने वाली बुक्सा जनजाति महिलाओं में परिवर्तन एवं विकास का मिथक : कल्याणकारी योजनाओं और पंचायतीराज के बावजूद का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन को निदर्श पर आधारित किया गया है। प्राथमिक सर्वेक्षण के आधार पर बाजपुर ब्लॉक में कुल 57 ग्राम पंचायतें स्थित हैं। जिसमें कुल जनसंख्या लगभग 1,37,329 है जिसमें कुल पुरूष लगभग 71,379 एवं महिला जनसंख्या लगभग 65,950 है। इन समुदायों में अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या लगभग 14,325 है।[65] जिसमें लगभग पुरूष जनसंख्या–8,125 एवं महिलाओं की संख्या–6,200 है। महिलाओं की संख्या अधिक होने के कारण अध्ययन क्षेत्र में समग्र रूप से इन्हें सम्मिलित नहीं किया जा सकता था। अतः अध्ययन हेतु दैव निदर्शन पद्धति का उपयोग कर निदर्श चयन का निर्णय लिया गया। निदर्श पूर्णतयाः प्रतिनिधित्व पूर्ण रहे इसलिए निर्णय लिया गया कि इन दोनों श्रेणियों से निदर्श के रूप में 310 महिलाओं का चयन लॉटरी पद्धति द्वारा किया गया। प्रस्तुत शोध पत्र मुख्य रूप से प्राथमिक आँकड़ों पर आधारित है तथा आंकड़ें एकत्र करने के लिए मुख्य रूप से साक्षात्कार अनुसूची तथा आवश्यकतानुसार असहभागी अवलोकन पद्धति का उपयोग किया गया ।

किसी भी शोध की व्याख्या से पूर्व उत्तरदाताओं की स्थिति एवं उनका पार्श्व चित्र एवं पृष्ठभूमि को देखना एक परम्परा है एक आवश्यकता भी ऐसा माना जाता है कि उससे शोध की समस्या को विभिन्न आयामों/परिप्रेक्ष्यों से देखने में सहायता प्राप्त होती है। आयु एक ऐसा चर होता है कि जो व्यक्ति के विचारों एवं उनके सोचने समझने की प्रक्रिया में एक विशेष योगदान देता है। प्रस्तुत शोध में सभी आयु समूह के उत्तरदाताओं को प्रतिनिधित्व प्राप्त है। जैसा कि निम्न सारणी से स्पष्ट होता है–

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

सारणी संख्या– 1.1
उत्तरदाताओं की आयु

आयु (वर्षों मे)	18–25	25–32	32–39	39–46	46–53	53–60	60 से अधिक	योग
आवृत्ति	69	51	68	52	35	33	2	310
प्रतिशत	22.26%	16.45%	21.94%	16.77%	11.29%	10.65%	0.64%	100%

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि सर्वाधिक उत्तरदाता (22.26 प्रतिशत) 18 से 25 वर्ष की आयु समूह के हैं इसके विपरीत सबसे कम उत्तरदाता (0.64 प्रतिशत) 60 वर्ष से अधिक आयु समूह के हैं। सारणी से स्पष्ट होता है कि 32–39 वर्ष के उत्तरदाताओं का प्रतिशत भी अच्छा खासा है। अतः उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि शोध में अधिकांश उत्तरदाता 46 वर्ष से कम आयु के हैं।

कल्याणकारी योजनाएं और पंचायतीराज

अनेक सामाजिक सुधारकों के प्रयासों द्वारा 19 वीं शताब्दी के अन्त तथा 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में सम्पूर्ण समाज में एक नई चेतना का विकास हुआ जिसमें महिला वर्ग भी इससे अछूता नहीं है। आधुनिकीकरण तथा शिक्षा के सुअवसर ने महिलाओं को सामाजिक तौर पर ही नहीं बल्कि आर्थिक एवं राजनैतिक स्तर पर भी बराबरी का दर्जा देने का प्रयास किया है। वर्तमान जीवन शैली अच्छे जीवन स्तर को जीने की लालसा तथा समाज में उच्च परिस्थिति प्राप्त करने के लिए महिलायें परम्परागत घर की चार दिवारी से बाहर निकलकर आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में अपना पूर्ण योगदान देकर एक नई भूमिका का निर्वहन कर रही हैं। जनजातीय समाज में भी महिलाओं में एक नई चेतना का विकास देखा जा सकता है। चूँकि इस समाज की संस्कृति, परम्पराएं, धार्मिक रीति–रिवाज तथा रहन–सहन का स्तर समाज के अन्य वर्गों से हटकर है। अतः अध्ययन में यह जानने का प्रयास किया गया है कि संवैधानिक तौर पर महिलाओं के राजनैतिक एवं आर्थिक निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी वर्तमान में सशक्त मानी जा सकती है। साथ ही राजनैतिक क्षेत्र में भी महिलाओं की सहभागिता बढ़–चढ़कर मानी गई है। अतः बुक्सा जनजाति महिलाओं के आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में सहभागिता विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी कल्याणकारी योजनाओं और पंचायतीराज की योजनाओं के अनुरूप हैं या नहीं को अध्ययन में देखने का प्रयास किया गया है। जहॉ एक ओर उत्तरदाता स्वयं सक्रिय राजनीति में भाग नहीं लेना चाहती वहीं दूसरी ओर सामाजिक एवं आर्थिक सुदृढता के लिए अपने पारिवारिक सदस्यों को राजनीति में सक्रिय सहभागिता के लिए प्रेरित करती है। शोध में यह जानना आवश्यक है कि क्या उत्तरदाताओं को राज्य सरकार अथवा केन्द्र सरकार द्वारा चलाई जा रही सरकारी योजनाओं का लाभ प्राप्त है। निम्न सारणी इसी बात को इंगित करती है–

सारणी संख्या– 1.2
राज्य सरकार/केन्द्र सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के लाभ के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

राज्य सरकार/केन्द्र सरकार योजना लाभ	हॉ	नहीं	योग
आवृत्ति	52	258	310
प्रतिशत	16.77%	83.23%	100%

उपरोक्त सारणी के आधार पर कहा जा सकता है कि सर्वाधिक उत्तरदाताओं (83.23 प्रतिशत) को किसी प्रकार की भी राज्य सरकार/ केन्द्र सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं से किसी भी प्रकार का लाभ प्राप्त नहीं है। जबकि 16.77 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि उन्हें इन योजनाओं का लाभ प्राप्त होता है।

ऐसा माना जाता है कि भारत में जनजातीय महिलाओं की एक विशाल संख्या अधीनता एवं उपेक्षित वर्ग सा जीवन व्यतीत कर रही है। जिसके कारण लैंगिक विषमता धीरे–धीरे बढती जा रही है। यद्यपि आर्थिक एवं राजनैतिक योजनाओं का लाभ इस समाज को मिल रहा है किन्तु जागरूकता के अभाव एवं साक्षरता की दर कम होने के कारण ये महिलायें उतनी लाभान्वित नहीं हो पाती जितना इन योजनाओं का मुख्य उद्देश्य रहा है। आर्थिक सहभागिता को देखने से पुर्व यह जानना आवश्यक है कि उत्तरदाताओं के परिवार के आय के मुख्य स्रोत कौन–कौन से हैं। निम्नांकित सारणी में उत्तरदाताओं के परिवार के आय के स्रोत को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है–

सारणी संख्या 1.3
परिवार के आय के स्रोत के सम्बन्ध में उततरदाताओं के मत

परिवार के आय के स्रोत	कृषि भूमि	नौकरी	व्यापार	मजदूरी	कुटिर उद्योग धन्धे	अन्य	योग
आवृत्ति	113	05	–	190	02	–	310
प्रतिशत	36.45%	1.61%	–	61.29%	0.65%	–	100%

जैसा कि उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है अधिकांश उत्तरदाताओं (61.29 प्रतिशत) के परिवार के आय के मुख्य स्रोत मजदूरी है, इसके विपरीत 0.65 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार के आय के मुख्य स्रोत कुटीर उद्योग धन्धे हैं। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि अधिकांश उत्तरदाता एवं उत्तरदाताओं के परिवार मजदूरी द्वारा अपना जीवन निर्वहन करते हैं। आज भी बुक्सा जनजातीय समाज में पैत्रिक सम्पत्ति पूर्णतः एक पुरूष की मानी जाती है। जैसा कि अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अधिकांश बुक्सा जनजाति की महिलायें मजदूरी करके अपने परिवार को आर्थिक सहयोग प्रदान करती है। चूँकि समस्त परिवार की आय का स्रोत मजदूरी तथा दैनिक वेतन भोगी कार्य मुख्यतः है। जिसमें वर्ष भर कार्य मिलना असम्भव है। अतः अधिकांश परिवारों द्वारा आवश्यकताओं

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

की पूर्ति हेतु ऋण लिया जाता है। जैसा कि निम्न सारणी से स्पष्ट होता है–

सारणी संख्या– 1.4

ऋण लेने की आवश्यकता के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

ऋण लेने की आवश्यकता	हॉ	नहीं	योग
आवृत्ति	245	65	310
प्रतिशत	79.03%	20.97%	100%

सारणी से आधार पर कहा जा सकता है कि अधिकांश उत्तरदाता (79.03 प्रतिशत) अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समय–समय पर ऋण लेते रहते हैं। जबकि 20.97 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस स्थिति को अस्वीकार किया है। इसी श्रृंखला में यह जानना आवश्यक है कि उत्तरदाताओं को किस सन्दर्भ में ऋण लेने की आवश्यकता होती है। निम्न सारणी इन्हीं आवश्यकताओं को स्पष्ट करती है–

सारणी संख्या– 1.5

ऋण लेने की आवश्यकता के कारणों के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

ऋण लेने के कारण	सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु	बच्चों की शिक्षा के लिए	कृषि कार्यों के लिए	रोग के उपचार के लिए	अन्य	योग
आवृत्ति	2	9	100	1	133	245
प्रतिशत	0.82%	3.67%	40.82%	0.40%	54.29%	100%

नोट– उपरोक्त सारणी में आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऋण लेने वाले उत्तरदाताओं को ही सम्मलित किया गया है।

जैसा कि उपरोक्त सारणी के आधार पर कह सकते हैं कि अधिकांश उत्तरदाताओं (54.29 प्रतिशत) ने स्वीकार किया है कि उन्हें अनिवार्य आवश्यकताओं जैसे– शादी विवाह, नामकरण, बीमार होने की स्थिति, मकान बनवाने तथा अन्य धार्मिक उत्सवों के अवसर पर ऋण लेने की आवश्यकता पडती है। इसी के साथ 40.82 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो कृषि के लिए बीज एवं खाद के लिए ऋण लेना आवश्यक समझते हैं। इसके विपरीत केवल 0.40 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो रोग के उपचारों के लिए ऋण लेना जरूरी समझते हैं।

सारणी संख्या– 1.6

ऋण प्राप्ति के श्रोत के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

ऋण प्राप्ति के श्रोत	बैंक	गैर सरकारी संगठन	महाजन	रिस्तेदार	अन्य	योग
आवृत्ति	122	1	1	3	118	245
प्रतिशत	49.79%	0.40%	0.40%	1.22%	48.16%	100%

नोट– उपरोक्त सारणी में आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऋण लेने वाले उत्तरदाताओं को ही सम्मलित किया गया है।

उपरोक्त सारणी के आधार पर कहा जा सकता है कि 49.79 प्रतिशत उत्तरदाता बैंक के माध्यम से ऋण लेना पसंद करते हैं। इसी के साथ 48.16 प्रतिशत उत्तरदाता अपने मित्रों एवं पडोसियों से ऋण प्राप्त करते हैं। इसके विपरीत 0.40 प्रतिशत उत्तरदाता गैर सरकारी संगठन एवं महाजन से समान रूप से ऋण लेना पसंद करते हैं।

प्राचीन काल में महिलाओं में राजनैतिक सहभागिता प्रायः कम पाई जाती थी। किन्तु संवैधानिक आरक्षण होने के कारण वर्तमान समय में महिलाओं में राजनैतिक गतिशीलता एवं सहभागिता तीव्र गति से बडी है किन्तु जनजातीय समाज में महिलाओं की राजनैतिक सहभागिता एवं गतिशीलता एक मृग मरीचिका बना हुआ है। यद्यपि 73 वें संविधान संशोधन के प्रावधानों को अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तारित करने के लिए कई विशेष अधिनियम पारित करते हुए समिति गठित कर दी गई। किन्तु जनजातीय समाज की महिलाओं में राजनैतिक जागरूकता में कोई विचारणीय परिवर्तन नहीं आयें। अधिकांश सारणियॉ इस बात को स्पष्ट करती हैं–

सारणी संख्या– 1.7

राजनीति में भाग लेने के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

राजनीति में भाग लेना	हॉ	नहीं	योग
आवृत्ति	30	280	310
प्रतिशत	9.68:	90.32:	100:

उपरोक्त सारणी के आधार पर कहा जा सकता है कि सर्वाधिक उत्तरदाता (90.32 प्रतिशत) किसी प्रकार की भी राजनीति में भाग नहीं लेते जबकि केवल 9.68 प्रतिशत उत्तरदाता राजनैतिक क्रियाओं में भाग लेती हैं। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि बुक्सा जनजाति की महिलाओं में राजनैतिक सहभागिता एवं क्रियाशीलता में उपेक्षा का भाव पाया गया। राजनैतिक प्रतिक्रियाओं में भाग लेने की स्थिति में उत्तरदाताओं के मतों को निम्नांकित सारणी के आधार पर स्पष्ट किया गया है–

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

सारणी संख्या– 1.8

उत्तरदाताओं द्वारा राजनीति में सहभागिता के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

राजनति में सहभागिता	मतदान द्वारा	पार्टी के सदस्य बनकर	चुनाव में सहभागिता करके	स्वयं चुनाव लड़कर	योग
आवृत्ति	305	–	–	5	310
प्रतिशत	98.39%	–	–	1.61%	100%

जैसा कि सारणी से स्पष्ट होता है कि 98.39 प्रतिशत उत्तरदाता यदि राजनीति में भाग लेते हैं तो केवल मतदाता के रूप में इसके विपरीत केवल 1.61 प्रतिशत उत्तरदाता स्वयं चुनाव लड़कर राजनीति में सक्रिय भागीदारी करती हैं।

सारणी संख्या– 1.9

मतदान किए जाने के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

मतदान का आधार	व्यक्ति की योग्यता देखकर	जातिगत आधार पर	आपसी रिस्तेदारी व सम्बन्धों के आधार पर	राजनीतिक दल के आधार पर	किसी के द्वारा सलाह देने पर	योग
आवृत्ति	107	17	08	175	03	310
प्रतिशत	34.52%	5.48%	2.58%	56.45%	0.97%	100%

उपरोक्त सारणी के आधार पर कहा जा सकता है कि अधिकांश उत्तरदाताओं (56.45 प्रतिशत) द्वारा मतदान राजनैतिक दल के आधार पर किया जाता है। जबकि 0.97 प्रतिशत उत्तरदाता किसी अन्य की सलाह पर अपना मतदान करते हैं। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि अधिकांश उत्तरदाता राजनैतिक दलों के शक्ति प्रदर्शन एवं कार्य प्रणाली से प्रभावित होकर अपने मत का प्रयोग करते हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि निरक्षरता एवं अज्ञानता के कारण आज भी बुक्सा जनजाति की महिलायें राजनीति के क्षेत्र से दूर रहना ज्यादा पसंद करती हैं। किन्तु अध्ययन में यह पाया गया कि सामाजिक कार्यो के नेतृत्व की जहॉ बात आती है तो वह सक्रिय सहभागिता का निर्वहन करती हैं।

भारतीय समाज में जनजातियों की परिकल्पना उनके भौगोलिक और सामाजिक अलगाव के रूप में की जाती है। किन्तु औपनिवेशिक शासन के उद्भव ने एक समान नागरिक योजना को लाकर समानता की स्थिति पैदा की जिसका परिणाम यह हुआ कि बड़े पैमाने पर जनजातीय समाज की अधिकांश भूमि गैर जनजातीय लोगों के पास चली गयी। जिस कारण इस समाज के अन्य वर्गों तथा उच्च जातियों से सदैव सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक तौर पर कई प्रकार के मतभेद व विरोध बने रहते हैं। ऐसी स्थिति में यह माना जाता है कि जनजातीय समाज राजनीति में भाग ले करके अपने अधिकारों के लिए लड़ सके। निम्नांकित सारणी में इसी बात को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है–

सारणी संख्या– 1.10

उच्च जाति या अन्य वर्ग से मतभेद या विरोध के कारण राजनीति में सहभागिता के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

उच्च जाति या अन्य वर्ग से मतभेद या विरोध	हॉ	नहीं	योग
आवृत्ति	114	196	310
प्रतिशत	36.77%	63.23%	100%

जैसा कि उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि अधिकांश उत्तरदाता (63.23 प्रतिशत) ने इस बात को अस्वीकार किया है कि वह उच्च जाति या अन्य वर्गों से वैचारिक मतभेद के विरोध में राजनीति में अपने अधिकारों के लिए आना चाहते हैं। जबकि 36.77 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस बात पर भी सहमति व्यक्त की है कि वैचारिक मतभेद एवं विरोध के कारण वह राजनीति में आना चाहती हैं। निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि अधिकांश उत्तरदाता इस बात को तो स्वीकार करते हैं कि उच्च जाति या अन्य वर्गों से उनके अनेक वैचारिक मतभेद हैं जोकि उनके अधिकारों के मार्ग में रोड़े अटकाता है। किन्तु राजनीति का क्षेत्र अधिकारों को प्राप्त करने के मार्ग के रूप उचित नहीं समझते। जबकि उन उत्तरदाताओं की संख्या भी अच्छी खासी है जो मानते हैं कि राजनीति वैचारिक मतभेद का विरोध तथा अधिकारों को प्राप्त करने का आसान तरीका है।

संवैधानिक तौर पर ग्रामीण समाज के विकास के लिए सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेक प्रकार की योजनाओं को लागू एवं क्रियान्वित किया गया है, जिससे ग्रामीण समाज की जीवन शैली को सुविधाजनक एवं लाभकारी बनाया जा सके। इस सन्दर्भ में निम्नांकित सारणी के आधार पर इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है–

सारणी संख्या– 1.11

स्वास्थ्य परीक्षण के लिए सरकारी चिकित्सकीय सुविधाओं के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

सरकारी चिकित्सकीय सुविधाओं का लाभ	हॉ	नहीं	योग
आवृत्ति	228	82	310
प्रतिशत	73.55%	26.45%	100%

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक उत्तरदाताओं (73.55 प्रतिशत) ने यह स्वीकार किया है कि वह स्वास्थ्य परीक्षण के लिए सरकारी चिकित्सा सुविधाओं का लाभ प्राप्त करते हैं। इसके विपरीत 26.45 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो इन सरकारी चिकित्सकीय सुविधाओं का लाभ प्राप्त नहीं करते। बुक्सा जनजातीय समाज में स्वास्थ्य परीक्षण के लिए ये महिलायें

बी0पी0एल0 कार्ड, स्मार्ट कार्ड का प्रयोग करते है। अतः स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समाज में इन योजनाओं का उचित प्रकार से लाभ के लिए सरकार द्वारा बनाए गए मुख्यमंत्री स्वास्थ्य बीमा योजना, स्वास्थ्य विभाग उत्तराखण्ड सरकार के कार्ड से लाभ लिया जाता है। अशिक्षा के कारण स्वास्थ्य सम्बन्धी सरकार की समस्त योजनाओं का लाभ ये जनजातीय महिलायें नहीं ले पातीं हैं। यद्यपि अनुसूचित जनजाति श्रेणी से सम्बन्ध रखने वाले लोगों के लिए शासकीय, अर्द्धशासकीय तथा शैक्षणिक संस्थाओं में नौकरी के लिए 7.5 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया है। किन्तु इन सभी प्रावधानों के बावजूद आरक्षण का लाभ इन जनजातियों द्वारा उचित रूप से नहीं उठाया जा रहा है। जिसकी पुष्टि निम्नांकित सारणी के द्वारा होती है–

सारणी संख्या– 1.12

आरक्षण के वास्तविक लाभ को प्राप्त करने के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के मत

आरक्षण का वास्तविक लाभ नौकरियों में	हॉ	नहीं	योग
आवृत्ति	05	305	310
प्रतिशत	1.61%	98.36%	100%

जैसा कि उपरोक्त सारणी के आधार पर कहा जा सकता है कि सर्वाधिक उत्तरदाताओं (98.39 प्रतिशत) ने यह स्वीकार किया है कि उनके परिवार के सदस्यों द्वारा किसी भी प्रकार की नौकरी में आरक्षण के सन्दर्भ में कोई भी लाभ प्राप्त नहीं किया है। इसके विपरीत केवल 1.61 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो यह मानते हैं कि उनके पारिवारिक के सदस्यों को आरक्षण का लाभ प्राप्त हुआ है। सारणी के द्वारा एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह स्पष्ट होती है कि संवैधानिक तौर पर अनेकों योजनाओं के बाद भी बुक्सा समाज आज भी इन लाभों से वंचित है। इसका प्रमुख कारण शायद यह हो सकता है कि आज भी यह समाज गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। जिनका प्रमुख उद्देश्य केवल अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। अशिक्षा एवं अज्ञानता के कारण सामाजिक परिवर्तन को न यह देख पाते हैं और न ही जानने की कोशिश करते हैं। उत्तरदाताओं को केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार द्वारा बनाई गई सरकारी योजनाओं में सबसे अधिक उपयोगी योजना खाद्य सुविधाओं सम्बन्धी योजना है, जिसमें प्रमुख रूप से न्यूनतम दरों में राशन (गेहूँ चावल आदि) उपलब्ध हो जाता है। इसके विपरीत उत्तरदाताओं ने चिकित्सकीय सुविधाओं को उपयोगी सुविधा माना है, साथ ही उत्तरदाताओं के एक बडें वर्ग ने कृषि ऋण को भी उपयोगी योजना माना है। इससे स्पष्ट होता है कि निर्धनता एवं अशिक्षा के कारण अधिकांशतः उत्तरदाताओं को केवल मूलभूत आवश्यकताओं सम्बन्धी सुविधा ही उपयोगी लगती है।

निष्कर्ष

बुक्सा जनजाति की महिलाओं को सरकार द्वारा दी जा रही समस्त सरकारी योजनाओं का लाभ प्राप्त नहीं हो पा रहा है क्योंकि अशिक्षा के कारण महिलाएं अपने अधिकारों व सरकारी योजनाओं से पूर्ण रूप से लाभान्वित नहीं हो पा रही है। सरकार द्वारा चलाई जा रही समस्त योजनाओं को धरातल स्तर पर लागू किया जाए तो बुक्सा जनजाति समाज की महिलाएं भी अजनजातीय समाज की महिलाओं के समकक्ष समय के अनुरूप अपने आप को स्थापित कर सकती हैं। आज भी बुक्सा जनजाति समाज की महिलाएं अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्षरत एवं प्रयत्नशील दिखाई देती हैं। सरकार की समस्त कल्याणकारी योजनाओं एवं पंचायती राज के होने के बावजूद परिवर्तन एवं विकास बुक्सा जनजाति में मिथक सा प्रतीत होता है। पंचायती राज में भी महिलाएं पूर्ण मनोयोग से पंचायत स्तर पर ग्राम प्रधान, क्षेत्र पंचायत सदस्य, जिला पंचायत सदस्य के लिए उम्मीदवारी दर्ज नहीं करा पा रही है और साथ ही साथ बढ़–चढ़कर प्रतिभाग नहीं कर पा रही है क्योंकि अशिक्षा के कारण महिलाएं अपने आप को असहज सा महसूस कर रही हैं । पंचायती स्तर पर विजय होने के बाद भी विजय हुई जनजाति महिलाएं विकासखंड स्तर पर होने वाली समस्त बैठकों में स्वयं प्रतिभाग नहीं कर पा रही हैं और उनके स्थान पर संभवतः उनके पति द्वारा प्रतिभाग किया जा रहा है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि महिलाएं आरक्षित पदों में पंचायती राज होने के कारण विराजमान तो है लेकिन अपने अधिकारों व कर्तव्यों के प्रति सजक प्रतीत नहीं होती हैं। शोध पत्र में स्पष्ट है कि सर्वाधिक उत्तरदाता (22.26 प्रतिशत) 18 से 25 वर्ष की आयु समूह के हैं इसके विपरीत सबसे कम उत्तरदाता (0.64 प्रतिशत) 60 वर्ष से अधिक आयु समूह के हैं। सारणी से स्पष्ट होता है कि 32–39 वर्ष के उत्तरदाताओं का प्रतिशत भी अच्छा खासा है। अतः स्पष्ट होता है कि शोध में अधिकांश उत्तरदाता 46 वर्ष से कम आयु के हैं। सर्वाधिक 83.23 प्रतिशत उत्तरदाताओं को किसी प्रकार की भी राज्य सरकार/केन्द्र सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं से किसी भी प्रकार का लाभ प्राप्त नहीं है। जबकि 16.77 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि उन्हें इन योजनाओं का लाभ प्राप्त होता है। जैसा कि उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है अधिकांश उत्तरदाताओं (61.29 प्रतिशत) के परिवार के आय के मुख्य स्रोत मजदूरी है, इसके विपरीत 0.65 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार के आय के मुख्य स्रोत कुटिर उद्योग धन्धे हैं। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि अधिकांश उत्तरदाता एवं उत्तरदाताओं के परिवार मजदूरी द्वारा अपना जीवन निर्वहन करते हैं। आज भी बुक्सा जनजातीय समाज में पैत्रिक सम्पत्ति पूर्णतः एक पुरूष की मानी जाती है। जैसा कि अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अधिकांश बुक्सा जनजाति की महिलायें मजदूरी करके अपने परिवार को आर्थिक सहयोग प्रदान करती है। चूँकि समस्त परिवार की आय का स्रोत मजदूरी तथा दैनिक वेतन भोगी कार्य मुख्यतः है। जिसमें वर्ष भर कार्य मिलना असम्भव है। अतः अधिकांश परिवारों द्वारा आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण लिया जाता है। 79.03 प्रतिशत उत्तरदाता अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समय–समय पर ऋण लेते रहते हैं। जबकि 20.97 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस स्थिति को अस्वीकार किया है। 54.29 प्रतिशत

उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है कि उन्हें अनिवार्य आवश्यकताओं जैसे– शादी विवाह, नामकरण, बीमार होने की स्थिति, मकान बनवाने तथा अन्य धार्मिक उत्सवों के अवसर पर ऋण लेने की आवश्यकता पड़ती है। इसी के साथ 40.82 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो कृषि के लिए बीज एवं खाद के लिए ऋण लेना आवश्यक समझते हैं। इसके विपरीत केवल 0.40 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो रोग के उपचारों के लिए ऋण लेना जरूरी समझते हैं। 49.79 प्रतिशत उत्तरदाता बैंक के माध्यम से ऋण लेना पसंद करते हैं। इसी के साथ 48.16 प्रतिशत उत्तरदाता अपने मित्रों एवं पडोसियों से ऋण प्राप्त करते हैं। इसके विपरीत 0.40 प्रतिशत उत्तरदाता गैर सरकारी संगठन एवं महाजन से समान रूप से ऋण लेना पसंद करते हैं।

वहीं राजनीति के क्षेत्र में 90.32 प्रतिशत उत्तरदाता किसी प्रकार की भी राजनीति में भाग नहीं लेते जबकि केवल 9.68 प्रतिशत उत्तरदाता राजनैतिक क्रियाओं में भाग लेती हैं। जिससे कहा जा सकता है कि बुक्सा जनजाति की महिलाओं में राजनैतिक सहभागिता एवं क्रियाशीलता में उपेक्षा का भाव पाया गया। जैसा कि सारणी से स्पष्ट होता है कि 98.39 प्रतिशत उत्तरदाता यदि राजनीति में भाग लेते हैं तो केवल मतदाता के रूप में इसके विपरीत केवल 1.61 प्रतिशत उत्तरदाता स्वयं चुनाव लड़कर राजनीति में सक्रिय भागीदारी करती हैं। 56.45 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा मतदान राजनैतिक दल के आधार पर किया जाता है। जबकि 0.97 प्रतिशत उत्तरदाता किसी अन्य की सलाह पर अपना मतदान करते हैं। अधिकांश उत्तरदाता राजनैतिक दलों के शक्ति प्रदर्शन एवं कार्य प्रणाली से प्रभावित होकर अपने मत का प्रयोग करते हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि निरक्षरता एवं अज्ञानता के कारण आज भी बुक्सा जनजाति की महिलायें राजनीति के क्षेत्र से दूर रहना ज्यादा पसंद करती हैं। किन्तु अध्ययन में यह पाया गया कि सामाजिक कार्यो में नेतृत्व की जहाँ बात आती है तो वह सक्रिय सहभागिता का निर्वहन करती हैं। 73.55 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया है कि वह स्वास्थ्य परीक्षण के लिए सरकारी चिकित्सा सुविधाओं का लाभ प्राप्त करते हैं। इसके विपरीत 26.45 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो इन सरकारी चिकित्सकीय सुविधाओं का लाभ प्राप्त नहीं करते। बुक्सा जनजातीय समाज में स्वास्थ्य परीक्षण के लिए ये महिलायें बी0पी0एल0 कार्ड, स्मार्ट कार्ड का प्रयोग करते है। अतः स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समाज में इन योजनाओं का उचित प्रकार से लाभ के लिए सरकार द्वारा बनाए गए मुख्यमंत्री स्वास्थ्य बीमा योजना, स्वास्थ्य विभाग उत्तराखण्ड सरकार के कार्ड से लाभ लिया जाता है। अशिक्षा के कारण स्वास्थ्य सम्बन्धी सरकार की समस्त योजनाओं का लाभ ये जनजातीय महिलायें नहीं ले पातीं हैं। यद्यपि अनुसूचित जनजाति श्रेणी से सम्बन्ध रखने वाले लोगों के लिए शासकीय, अर्द्धशासकीय तथा शैक्षणिक संस्थाओं में नौकरी के लिए 7.5 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया है। 98.39 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया है कि उनके परिवार के सदस्यों द्वारा किसी भी प्रकार की नौकरी में आरक्षण के सन्दर्भ में कोई भी लाभ प्राप्त नहीं किया है। इसके विपरीत केवल 1.61 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो यह मानते हैं कि उनके पारिवारिक सदस्यों को आरक्षण का लाभ प्राप्त हुआ है। शोध के द्वारा एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह स्पष्ट होती है कि सांवैधानिक तौर पर अनेकों योजनाओं के बाद भी बुक्सा समाज आज भी इन लाभों से वंचित है।

सुझाव

केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार द्वारा बनाई गई सरकारी योजनाओं को धरातल पर लागू करना होगा। सरकार की सबसे अधिक उपयोगी योजना जिसमें प्रमुख रूप से खाद्य सुविधाओं सम्बन्धी योजना को न्यूनतम दरों में राशन (गेहूँ चावल आदि) को उपलब्ध कराना होगा। साथ ही चिकित्सकीय सुविधाओं, कृषि ऋण को भी आमजन के लिए उपयोगी योजना बनाना होगा। सरकार को निर्धनता एवं अशिक्षा को दूर करने का प्रयास करना होगा। बुक्सा जनजाति समाज की मूलभूत आवश्यकताओं सम्बन्धी सरकारी योजनाओं का कियान्वयन करना होगा। बुक्सा जनजाति समाज की महिलाओं की पंचायत स्तर पर राजनीतिक सहभागिता को बढ़ाने के लिए राज्य सरकार व केंद्र सरकार को विकासात्मक कार्यक्रमों को जमीनी स्तर पर लागू करना होगा । शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार करना होगा । शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य से संबंधित समस्त योजनाओं के विषय में बुक्सा जनजाति समाज की महिलाओं को जागरुक करना होगा । महिला सशक्तिकरण के साथ ही साथ महिला अधिकारों, महिला संरक्षण के लिए बनाए गए समस्त कानूनों व महिला विकास एवं जनजातीय उत्थान कार्यक्रमों को धरातल स्तर पर पहुंचाना सरकार की जिम्मेदारी होगी । सरकार के साथ ही साथ अजनजातीय समाज के लोगों को भी इस समाज के उत्थान के लिए अपना सहयोग एवं प्रोत्साहन प्रदान करना होगा । सूचना और संचार की आधुनिक तकनीकी का उपयोग करने के लिए लोगों को जागरुक करना व पंचायत के महत्व द्वारा ई–पंचायत स्तर पर अधिकारों की जानकारी प्रदान करना सरकार का कर्तव्य होगा । पंचायत स्तर पर बुक्सा जनजाति की महिलाओं को आगे बढ़ाने के लिए महिला आरक्षण के साथ ही साथ जनजातीय समाज की महिलाओं के उत्थान के लिए सरकार को जन–जागरूकता कार्यक्रमों को भी चलाना होगा । परिवार की आय के मुख्य स्रोत के लिए कुटीर उद्योग धन्धों को स्थापित करना होगा। बुक्सा जनजाति की महिलायें मजदूरी करके अपने परिवार को आर्थिक सहयोग प्रदान करती है इसलिए सरकार आय के स्रोतों में बढ़ोत्तरी करे जिससे की वर्ष भर मजदूरी का कार्य मिलना सम्भव हो सके।

सन्दर्भ ग्रंथ्स सूची

1. *सिंह, राजाराम, बैगा एवं कोटवालिया जनजाति की सामाजिक सांस्कृतिक संरचना, निखिल पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स,आगरा, 2015, पृष्ठ सं. 21,*
2. *सहाय, एन.के. (1963) इंपैक्ट ऑफ क्रिश्चियानिटी ऑन ओरांव ऑफ द विलेज इन छोटा नागपुर, अप्रकाशित शोध प्रबंध, रांची विश्वविद्यालय ।*
3. *प्रसाद, आर.के. (1968) इकोनामिक एंड सोशल चेंज एमांग पहारिय ऑफ पलामू : केस स्टडी ऑफ*

ट्राइबल डायनामिक्स, अप्रकाशित शोध प्रबंध, रांची विश्वविद्यालय, रांची ।

4. *सहाई एनके (1968) डायनामिक्स ऑफ़ ट्राईबल लीडरशिप न्यू देल्ही बुक हाउस ।*
5. *सच्चिदानंद (1970) कल्चरल चेंज इन ट्राइबल बिहार, कलकत्ता बुक लैंड ।*
6. *कर्वे,एरावती और आचार्य, हेमलता (1970) द रोल ऑफ वीकली मार्केट इन द ट्राइबल, रूरल एंड अर्बन सेटिंग्स।*
7. *सरकार, राजेंद्र (1972) द इमर्जेन्स आफ भगत एमांग द गोंड, इस्टर्न एंथ्रोपोलॉजी पृष्ठ 25 (स) ।*
8. *विद्यार्थी, एल.पी (1973) डायनामिक्स आफ ट्राइबल लीडरशिप इन बिहार, इलाहाबाद किताब महल ।*
9. *मुखर्जी, बी.सी (1973) द चेरो ऑफ पालामऊ, एंथ्रोपोलाजिकल सर्वे इन इण्डिया, पृ. 88.*
10. *श्रीवास्तव,ए.आर.एन.(1975) मेडलिंग डेवलपमेंट सर्विस इन डोमेस्टिक ग्रुप्स, शोध प्रबंध इलाहाबाद ।*
11. *कोठारी, के.एल. (1976) ट्राइबल सोशल चेंज इन राजस्थान, अप्रकाशित शोध प्रबंध, उदयपुर यूनिवर्सिटी ।*
12. *गौतम, एम.के.(1977) ए सर्च ऑफ एन आईडेंटिटीः ए केस ऑफ संथाल नार्दन इंडिया, पृष्ठ 375 –*
13. *रावत, एस.पी. (1979) पोआरी बुद्धिया मैरिज आदिवासी, पृष्ठ 11(3).*
14. *विद्यार्थी, एल.पी.(1981) ए सोशियो कल्चरल प्रोफाइल ऑफ द ओरांव ऑफ छोटा नागपुर, कोल एंथ्रोपोलॉजी 13–19, जगर्ब युगोस्लाविया, यू.डी.सी. 572.9.*
15. *सिंह (1989) ट्राइबल डेवलपमेंट पास्ट एफोर्ट एंड न्यू चैलेंज, उदयपुर हिमांशु पब्लिकेशन, वॉल्यूम 11.*
16. *व्यास, एन.ए.(1989) ट्राइबल डेवलपमेंट बिटवीन प्रीमोर्डिनिटी एंड चेंज, इन सिंह एंड व्यास (एडी) ट्राइबल डेवलपमेंट एंड न्यू चैलेंज, उदयपुर हिमांशु पब्लिकेशन ।*
17. *नगला (1989) ट्राइबल डेवलपमेंट इन आंध्र प्रदेश पर्सपेक्टिव, पृ.59–6.*
18. *रायवर्मन, बी.के. (1992) इसुज इन ट्राइबल डेवलपमेंट इन चौधरी बी (एडी) ट्राइबल ट्रांसफॉर्मेशन इन इंडिया, वो. 11 न्यू देल्ही, इंटर इंडिया पब्लिकेशन ।*
19. *शाह, जी (1992) ट्राइबल इसुज, प्राब्लेम एंड पर्सपेक्टिव इन चौधरी बी (एडी) प्रिमिटिव ट्राइबल फर्स्ट स्टेप, न्यू दिल्ली मिनिस्ट्री आफ होम अफेर्य गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ।*
20. *श्रीवास्तव, मालिनी (2007) द सेक्रेट कांपलेक्स आफ मुंडा ट्राइब्स एंथ्रोपोलॉजी, 9(4) 323–330 कमला राज ।*
21. *दास, एन.के.कल्चरल डायवर्सिटी रेलिजियस सिंक्रीएटिज्म एंड पीपल आफ इंडिया एंथ्रोपोलाजिकल इन्टरप्रटेशन ।*
22. *श्रीवास्तव, विनय कुमार (2010) सोशियो इकोनामिक करेक्टरस्टिक आफ ट्राइबल कम्युनिटीज दैट काल देम सेल्व हिंदू, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ दलित स्टडीज एंड रेलिजियस एंड डेवलपमेंट प्रोग्राम नई दिल्ली वो. 1*
23. *अरोरा, विभा (2011) फ्रेमिंग इंडिजेनाइटी एंड एन्वायरमेंटलिज्म एमांग लेप्चा आफ सिक्किम इंस्टीट्यूट फार एशियन स्टडीज ।*
24. *सहाय, रविशंकर (2011) झारखंड : ए स्टडीज इन कल्चरल पैराडाइम, इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट फार एशियन स्टडीज।*
25. *रसेल एवं हीरालाल (1916) हैंडबुक आन द ट्राइबल एंड कास्ट आफ सेंट्रल प्रोविंसेस आफ इंडिया वो. 4 मैकमिलन प्रेस ।*
26. *बहादुर एवं दुबे (1957) ए स्टडी आफ ट्राइबल पीपल एंड ट्राईबल एरिया आफ मध्य प्रदेश, इंदौर गवर्नमेंट रीजनल प्रेस ।*
27. *अरोरा (1972) कंप्रेटिव पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन : एन इकोलॉजिकल पर्सपेक्टिव, एसोसिएटेड पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।*
28. *अली,एस.ए. (1973) ट्राइबल डेमोग्राफी इन मध्यप्रदेश, भोपाल ,जय भारत पब्लिकेशन ।*
29. *जोशी (1982) इकोनामिक डेवलपमेंट एंड सोशल चेंज इन साउथ।*
30. *रायजादा (1985) ट्राइबल डेवलपमेंट इन मध्यप्रदेश : ए प्लानिंग पर्सपेक्टिव, देल्ही इंटर इंडिया पब्लिकेशन ।*
31. *पांडेय (1986) इंपैक्ट ऑफ इंडस्ट्रीलाइजेशन आन द रूरल कम्युनिटी,रिसर्च पब्लिकेशन इन सोशल साइंस न्यूयॉर्क, नई दिल्ली।*
32. *पटेल एवं वैष्णव (1988) प्लानिंग स्ट्रेटजी फार ट्राइबल डेवलपमेंट, देल्ही इंटर इंडिया पब्लिकेशन।*
33. *बैनर्जी, बी.जी. एवं भाटिया,के.(1988) ट्राइबल डेमोग्राफी ऑफ गोंड, देल्ही गेन पब्लिकेशन हाउस।*
34. *टेखरे (1989) आदिवासी महिलाएं एवं परिवार नियोजन कार्यक्रम, अप्रकाशित शोध प्रबंध, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर।*
35. *चौहान (1990) ट्राइबल वूमेन एंड सोशल चेंज इन इंडिया, इटावा, ए.सी. ब्रदर्स।*
36. *करीरा (1995) नटवारा ग्राम के गोंड परिवारों का आर्थिक जीवन, अप्रकाशित शोध प्रबंध, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर।*
37. *सिंह, अंशुमाला (1995) मंडला जिले की जनजातियों में हो रहे सामाजिक परिवर्तन एवं विकास का विवेचनात्मक अध्ययन, अप्रकाशित शोध प्रबंध, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर।*
38. *मरकाम (1996) नियोजित सामाजिक परिवर्तन के अंतर्गत विकास कार्यक्रमों का गोंड जनजाति पर प्रभाव, अप्रकाशित शोध प्रबंध, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर।*
39. *पांडेय, जी.डी (1998) स्टडी आफ सोशल फैक्टर आन ह्यूमन फर्टिलिटी एंड फैमिली विद स्पेशल रिफ्रेश टू मेजर प्रिमिटिव ट्राइब्स ऑफ एम.पी,अप्रकाशित शोध प्रबंध, शित शोध प्रबंध रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर।*

40. *राय, ज्योर्तिमय (1999) सोशल कल्चरल आडीटरमेंट्स आफ फर्टीलिटी विहेवियर ऑफ खैरवाल ट्राइब्स आफ एम.पी, अप्रकाशित शोध प्रबंध, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर।*
41. *वेल्टे, थान्गुमुलियन, मथाई, एल्डोज के., जार्ज सीमन (2008) ए सोशियो लिंग्विस्टिक इश्यूज ओं लिंग्विस्टिक सर्वे एमांग परधान कम्युनिटी आफ सेंट्रल इंडिया, सील इलेक्ट्रॉनिक सर्वे रिपोर्ट ।*
42. *कोपर (1977) डीट्राइबलीसुशन एंड एडमिनिस्ट्रेशन चैलेंजर्स इन गुप्ता आर.(एडी.) प्लानिंग फॉर फॉर ट्राईबल डेवलपमेंट प्रोग्राम, देल्ही अंकुर पब्लिकेशन ।*
43. *नायक, मसावी एंड पांडवा (1979) द कोल्धा आफ गुजरात।*
44. *पटेल एवं रामचंदानी (1989) ट्राइबल डेवलपमेंट इन गुजरात वो.11.*
45. *पटेल, पी. (1989) स्टेटस आफ ट्राईबल डेवलपमेंट इन गुजरात केस आफ आई.टी.डी.पी. दाहोद इन चौधरी वी– (एडी.) ट्राइबल ट्रांसफॉरमेशन इन इंडिया वो.11 न्यू देल्ही इंटर इंडिया पब्लिकेशन ।*
46. *सिंह, सुरेश कुमार एवं लाल, राजेंद्र बहरी (2003) गुजरात पार्ट 1, पापुलर प्रकाशन ।*
47. *परमार, अनिता, वरुच, अंकुर एवं अन्य (अप्रैल 2007) शॉपिंग आफ ट्राईबल आईडेंटिटी एंड कॉन्सेप्ट आफ सेल्फ रूल इन गुजरात, बिहेवियरल साइंस सेंटर, सेंट जेवियर नॉन फॉर्मल एजुकेशन सोसायटी, सेंट जेवियर कॉलेज कैंपस अहमदाबाद ।*
48. *कुमार, शशिकांत (2009) इंस्टीट्यूशन अरेंजमेंट फॉर बंबू पार्ट–2, जुलाई 28, 2010, 14.22, मेरी न्यूज ।*
49. *कुमार, मनीष एवं टी.एन.एन. (2011) टाइम्स ऑफ इंडिया, लेख ।*
50. *कैनथ, गुरुशरण सिंह (2011) क्लाइमेट चेंज सस्टेनेबल डेवलपमेंट एंड इंडिया, पेपरबैक ।*
51. *बसंत, निरगुणे (1986) बैगा – प्रकृति से सीधे संबंध, अंतर्गत मध्यप्रदेश संदेश, अगस्त, मध्यप्रदेश का आदिवासी संसार, भोपाल ।*
52. *शर्मा, एन. एवं द्विवेदी, पंकज (2006) सोशियो डेमोग्राफिक करेक्टेरिस्टिक्स आफ द बैगास आफ समनापुर ब्लॉक आफ डिंडोरी डिस्ट्रिक, मध्य प्रदेश, द एंथ्रोपोलाजिस्ट, नेशनल जर्नल ऑफ कंटेंपरारी एंड एप्लाइड स्टडीज 8(9) पृष्ठ 203– 206.*
53. *एन्थोवन, आर.ई. (1972) द ट्राइब्स एंड कास्ट्स आफ बॉम्बे वो. 3, कास्मो पब्लिकेशन, देल्ही ।*
54. *भट्ट,आर.जे. एवं शर्मा, आर.के. (1977) द कोटवालिया साउथ गुजरात : ए प्रिमिटिव ग्रुप्स आफ ट्राइब्स : एन एथनोग्राफिक एकाउंट, गुजरात ट्राइबल डेवलपमेंट कॉरपोरेशन अहमदाबाद ।*
55. *बोरा, रघुवीर एवं चौधरी, मुकुंद भाई (1977) द कोटवालिया आफ साउथ गुजरात : एथनोग्राफिक एकाउंट, गुजरात ट्राइबल डेवलपमेंट कॉरपोरेशन, अहमदाबाद ।*
56. *घटक, एन.के. (1997) इनसाइक्लोपीडिया प्रोफाइल आफ इंडियन ट्राइब्स (एडी.) सच्चिदानंद, आर.आर. प्रसाद, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।*
57. *दोषी, हरीश (1998) इनसाइक्लोपीडिया आफ इंडियन ट्राइब्स (एडी.) सच्चिदानंद, आर.आर. प्रसाद वो. 2, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।*
58. *सिंह, राजाराम, बैगा एवं कोटवालिया जनजाति की सामाजिक सांस्कृतिक संरचना, निखिल पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, आगरा, 2015 पृष्ठ सं. 21–55.*
59. *कु0 शशि वर्मा :– उत्तरांचल तराई में स्थित थारू एवं बुक्सा जनजाति की महिलाओं प्रस्थिति का एक तुलनात्मक अध्ययन, शोध प्रबन्ध– 2006–07,पृ0सं0 – 20. (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध कु0 वि0 वि0 नैनीताल).*
60. *डॉ0 वी0 एस0 बिश्ट, ''उत्तराँचल ग्रामीण समुदाय, पिछड़ी जाति एवं जनजातीय परिदृश्य'' श्री अल्मोड़ा बुक डिपो मालरोड, अल्मोड़ा 1997,पृ0सं0–177, 179.*
61. *श्रीवास्तव ए0 एन0 :– ''उत्तर प्रदेश की जनजातियाँ'' के0 के0 पब्लिकेशन्स 875, कटरा इलाहाबाद– 211002, पृ0 सं0 231.*
62. *ग्रिगसन जी0 ए0 :–'' लिंगविस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया'' वाल्यूम 1 पार्ट 2.*
63. *नेविल एच0 आर0 –''डिस्ट्रिक गजेटियर ऑफ नैनीताल'',इलाहाबाद, वाल्यूम गगपअ ,1904.*
64. *डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद बलोदी–''उत्तराखण्ड समग्र ज्ञानकोष'', बिनसर पब्लिशिंग कं0 देहरादून, 2008, पृ0 सं0 – 202.*
65. *लोक सूचना अधिकारी/खण्ड विकास अधिकारी बाजपुर, ऊधमसिंह नगर, ''सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के अनुसार सूचना, दिनाँक 14–10–2014, बिन्दु 01 से 09 तक.*